ज्योतिष-ग्रन्थमाला का प्रथम पुष्प

संग्रहकर्त्ता एवं अनुवादक:

पं० नेमिचन्द्र जैन

ज्योतिष-शास्त्री, न्याय-ज्योतिष-तीर्थ

संपादक:

पं० के० भुजबली शास्त्री, विद्याभूषण

प्रथम संस्करण]　　वीर सं० २४६८　　[मूल्य ॥)

प्रकाशक:
पं० नेमिचन्द्र जैन
ज्योतिष-शास्त्री, न्याय-ज्योतिष-तीर्थ
जैन-बाला-विश्राम, धनुपुरा,
आरा।

मुद्रक:
श्री देवेन्द्र किशोर जैन
श्री सरस्वती-प्रिंटिंग-वर्क्स, लि०
आरा।

भूमिका

जिस शास्त्र के द्वारा सूर्य, चन्द्र, मंगल आदि ग्रहों की गति, स्थिति आदि एवं गणित, जातक, होरा आदि का सम्यक् बोध हो उसे ज्योतिष-शास्त्र कहते हैं। विद्वानों का मत है कि भिन्न-भिन्न शास्त्रों के समान यह शास्त्र भी मनुष्य जाति की प्रथमावस्था में अङ्कुरित हो ज्ञानोन्नति के साथ-साथ क्रमशः संशोधित तथा परिवर्धित होकर वर्तमान अवस्था को प्राप्त हुआ है। इस ज्योतिष-शास्त्र के तीन भेद हैं : गणित, सिद्धान्त और फलित।

गणित ज्योतिष में अंकगणित, बीजगणित, त्रिकोणमिति आदि ग्रन्थ सम्मिलित हैं। इसके द्वारा समीकरण आदि से कल्पना करके ग्रहों का मान लाया जाता है तथा धरातल आदि के ऊपर रेखा करके ग्रहों के क्षेत्रों की रचना की जाती है। पृथ्वी की परिधि और व्यास एवं ग्रह-नक्षत्रों के व्यास आदि का भी मान इसीसे जाना जाता है। सफल गणितज्ञ ही सिद्धान्त ज्योतिष को जान सकता है। गणित और सिद्धान्त का परस्पर अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। चापीय गणित के द्वारा ग्रहों के वृत्त अण्डाकार कल्पना करके एक ग्रह के क्षेत्र को दूसरे के क्षेत्र में परिणमन करके द्युज्या, कुज्या, क्रान्ति, समशङ्कु, अग्रा, अक्षांश, लम्बांश आदि का मान ज्ञात करते हैं। रेखागणित के द्वारा खगोल के दोनों ध्रुवों में दो नलिकाएँ बाँध कर उसके आधार पर खगोल के बाहर दृग्गोल की रचना की जाती है। खगोल में क्रान्तिवृत्त, विमण्डल आदि भगोलीय वृत्तों से जो गोल

बांधा जाता है वह दृग्गोल कहलाता है। इस प्रकार गोल-विषयक ज्ञान भी गणित ज्योतिष के द्वारा ही होता है।

सिद्धान्त—इसमें ग्रहों का आनयन किया जाता है। यह आनयन भी तीन प्रकार से होता है। सिद्धान्त, तन्त्र और करण। उत्सर्पणी या अवसर्पणी काल के प्रारम्भ से ग्रहों का आनयन जिसमें हो, वह सिद्धान्त, युगादि से ग्रहादि का आनयन जिसमें हो, वह तन्त्र और शकाब्द पर से ग्रहानयन जिसमें हो, वह करण कहलाता है। सिद्धान्त में जीवा और चाप के द्वारा ग्रहों का फल लाकर, आनीत मध्यम ग्रह में संस्कार कर देते हैं तथा भौमादि ग्रहों का मन्दफल और शीघ्रफल लाकर मन्दस्पष्ट और स्पष्ट मान सिद्ध करते हैं। सूर्य तथा चन्द्रमा के स्पष्ट राश्यादि पर से तिथि, नक्षत्र, योग करण आदि को लाते हैं। सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण भी इसीपर से सिद्ध होते हैं। इसी सिद्धान्त ज्योतिष की स्पष्ट विधि को लेकर अंग्रेजी गणित विशारद आजकल के पञ्चाङ्गों में ग्रहस्पष्ट सिद्ध करके उनसे तिथि आदि का साधन करते हैं तथा इसीपर से विद्वत्तापूर्ण ग्रहण, उदयास्त, युति, शृङ्गोन्नति आदि को भी लाते हैं। इसी सिद्धान्त ज्योतिष पर से अक्षांश का ज्ञान करके स्पष्ट भूपरिधि एवं ग्रहों की परिधि आदि का ज्ञान भी निम्न प्रकार आसानी से हो सकता है।

देश-भेद से ध्रुव की ऊँचाई को अक्षांश कहते हैं। जहाँ ध्रुव की ऊँचाई नहीं है, उसको निरक्ष देश कहते हैं। उस निरक्ष से दक्षिण अथवा उत्तर हटने से अक्षांश (ध्रुवोन्नति) उत्पन्न होते हैं।

भूपृष्ठ पर विषुवरेखा में निरक्षदेश स्थित है, वहाँ से हमलोग उत्तर की तरफ हटे हैं और जितने ही हटते जायँगे, उतने ही वेध करने से अक्षांश भिन्न-भिन्न होते जायँगे और जब परम उत्तर ध्रुव देश तक चले जायँगे, तो ध्रुव खस्वस्तिक में अर्थात् ठीक सिर के ऊपर हो जायगा और वहाँ पर अक्षांश पूरे ९० अंश होंगे। इस प्रकार से दो देशों के अक्षांशान्तरों को मालूम करके अनुपात से भूपरिधि का मान आ जायगा। इसी प्रकार ग्रहों की शीघ्रपरिधि, मन्दपरिधि आदि का ज्ञान करके ग्रहों के राश्यादि का मान ज्ञात हो जायगा। यह सिद्धान्तज्योतिष अमूल्य, अद्वितीय, चमत्कारी शास्त्र है। इसके द्वारा मनुष्य त्रैकालिक पदार्थों को करामलकवत् प्रत्यक्ष जान सकता है। इससे ग्रहों के गूढ़ रहस्य का ज्ञान निर्मल आदर्श की तरह हो जाता है।

फलित—इसके द्वारा ग्रह नक्षत्रादि की गति या संचार आदि को देखकर प्राणियों की भावी दशा, कल्याण, अकल्याण आदि का वर्णन किया जाता है। इसके भी तीन भेद हैं। होरा, संहिता और मुहूर्त्त।

होरा—इसका अर्थ है लग्न, अर्थात् लग्न पर से शुभ, अशुभ फल का ज्ञान कराना होरा शास्त्र का काम है। इसमें जातक के उत्पत्ति-समय के नक्षत्र, तिथि, योग, करण आदि का फल अत्युत्तमता के साथ बताया गया है। ग्रह एवं राशियों के वर्ण, स्वभाव, गुण, आकार, प्रकार आदि बातों का प्रतिपादन इस शास्त्र में बड़ी सफलता-पूर्वक किया गया है। जन्म-कुंडली का फल-प्रतिपादन करना

तो इस शास्त्र का मुख्योद्देश है। तथा इस शास्त्र में यह भी बताया गया है कि आकाशस्थ राशि और ग्रहों के बिम्बों में स्वाभाविक शुभ और अशुभपना मौजूद है, किन्तु उनमें परस्पर साहचर्यादि तात्कालिक सम्बन्ध से फलविशेष शुभाशुभ रूप में परिणत हो जाता है जिसका प्रभाव पृथ्वीस्थित प्राणियों पर भी पूर्ण रूप से पड़ता है। इस शास्त्र में प्रधानता से देह, द्रव्य, पराक्रम, सुख, सुत, शत्रु, कलत्र, मृत्यु, भाग्य, राज्यपद, लाभ और व्यय इन बारह भावों का वर्णन रहता है। इस शास्त्र में सबसे विशेष ध्यान देने लायक लग्न और लग्नेश हैं। ये जब तक स्थिति में सुधरे हुए हैं, तब तक जातक के लिये कोई अशुभ संभावना नहीं होती है; जैसे, लग्न तथा लग्नेश बलवान् हैं, तो शरीर-सुख, संतति-सुख, अधिकार-सुख, मुकद्दमे में विजय, सभा में सम्मान, कारोबार में लाभ तथा साहस आदि की कमी नहीं पड़ती है। यदि लग्न अथवा लग्नेश की स्थिति विरुद्ध है, तो जातक को सब तरह के शुभ कामों में विघ्न-बाधाएँ उपस्थित होती हैं। लग्न के सहायक बारह भाव हैं, क्योंकि आचार्यों ने भचक्र को जातक का पूर्ण शरीर माना है; इसलिये जन्म कुंडली के बारह भावों में से यदि कोई भाव बिगड़ जाय, तो जातक को सुख, सम्पत्ति में कमी पड़ जाती है। अतएव लग्न-लग्नेश, भाग्य-भाग्येश, पञ्चम-पञ्चमेश, सुख-सुखेश, अष्टम-अष्टमेश, बृहस्पति, चन्द्र, शुक्र, मंगल, बुध इनकी स्थिति तथा ग्रहस्फुट में वक्री, मार्गी, भावोद्धारचक्र, द्रेष्काणचक्र, कुंडली, नवांश कुंडली आदि का विचार होराशास्त्र में विस्तार से किया जाता है।

संहिता—इस शास्त्र में भूशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयाद्यानयन, गृहोपकरण, इष्टिका, द्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशय, उल्कापात, निमित्त, वृष्टि, ग्रहों के उदयास्त का फल आदि अनेक बातों का वर्णन रहता है। इस शास्त्र का फलित में बड़ा ही उच्च स्थान है।

मुहूर्त्त—इसमें प्रत्येक माङ्गलिक कार्य के लिये शुभ समय का वर्णन किया जाता है। इस प्रस्तुत पुस्तक में मुहूर्त्त का ही वर्णन है। विना मुहूर्त्त के कोई भी माङ्गलिक कार्य प्रारम्भ करना उचित नहीं है। क्योंकि समय का प्रभाव प्रत्येक जड़ और चेतन सभी प्रकार के पदार्थों पर पड़ता है, इसीलिये हमारे जैनाचार्यों ने भी गर्भाधानादि अन्यान्य संस्कार एवं प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, यात्रा आदि सभी माङ्गलिक कार्यों के लिये शुभ मुहूर्त्त का ही आश्रय लेना आवश्यक बतलाया है। तीर्थङ्करों के पाँचों कल्याण एवं भिन्न-भिन्न महापुरुषों के जन्मादि शुभ मुहूर्त्त में ही प्रतिपादित हैं। जैन-वैद्यक तथा मंत्रशास्त्र-सम्बन्धी ग्रन्थों में भी मंगल मुहूर्त्त में ही औषध सम्पन्न एवं ग्रहण और शान्ति, पौष्टिक, उच्चाटन आदि कार्यों का विधान है। कर्मकाण्ड-सम्बन्धी प्रतिष्ठापाठ आराधनादि ग्रंथों में भी इस शास्त्र का आदर विशेष दृष्टिगोचर होता है। परन्तु दिगम्बर जैन-साहित्य में ऐसा सर्वाङ्गपूर्ण कोई भी मुहूर्त्त ग्रन्थ अभी तक उपलब्ध नहीं है, जिसमें सभी आवश्यक कार्यों के मुहूर्त्त मिल जायँ। इसी कमी की पूर्त्ति करने के लिये ही प्रस्तुत पुस्तक का प्रायः जैनाचार्यों के मतानुसार संग्रह किया गया है। इसके संग्रह में

श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही सम्प्रदाय के ग्रन्थों का अवलम्बन किया गया है और श्लोक व गाथा के नीचे उस ग्रन्थ का नाम भी दिया गया है। इस संग्रह-कार्य के लिये मुझे पहले-पहल पं० के० भुजबली जी शास्त्री, विद्याभूषण, अध्यक्ष जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा, ने प्रेरित किया और उन्हींकी प्रेरणा एवं शुभ सम्मति से इस कार्य को मैंने पूर्ण किया है। बल्कि आपको ही इस पुस्तक के सम्पादकत्व का भार भी सौंपा गया है। इसके प्रकाशन में पूज्य भगत प्यारेलाल जी, कलकत्तावाले ने ५०) रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की है तथा आपकी ही अनुकम्पा से मैं इस पुस्तक के प्रकाशित करने में अग्रसर हुआ हूँ। अतः मैं आपका चिर कृतज्ञ रहूँगा। मुझे आशा है कि जैन-समाज इस 'मुहूर्त्तदर्पण' को सहर्ष अपनायेगी और इस मेरे प्रथम प्रयास को सफल बनाकर मुझे प्रोत्साहित करेगी।

यदि इसमें कुछ त्रुटियाँ रह गयीं हों, तो विज्ञ पाठक उन त्रुटियों को मेरे पास लिख भेजने की अवश्य कृपा करेंगे; ताकि आगामी संस्करण में उन त्रुटियों को दूर किया जा सके।

जैन-बाला-विश्राम, आरा
प्रथम ज्येष्ठ शुक्ला १
वि० सं० १९९९

नेमिचन्द्र जैन

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ

॥ ॐ ॥

मुहूर्त्तदर्पण ।

मन्दिर-निर्माण का मुहूर्त्त

कालनागमावर्ज्य मानयेत् भूपसीमधरपार्श्वकान्मुदा ।
ज्योतिरर्थपरिपूर्णकारुकैः संनियोज्य खनिमुत्तमां क्रियात् ॥१४२॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—राजा की आज्ञा प्राप्त कर, समीपवर्ती आमन्त्रित साधर्मी भाइयों को सम्मानित कर, एवं ज्योतिषी और चतुर कारीगरों को बुलाकर नीव को खोद कर भरे। परन्तु इस नीव में राहु के चक्रानुसार राहु का मुख-भाग वर्ज्य है ।

राहु के मुख का ज्ञान

मीनमेषवृषराश्यवस्थिते ग्रीष्मभासि शिवदिग्यमाननम् ।
युग्मकेसरिकुलीरगेऽनिले कन्यकालितुलगेऽग्रये भवेत् ॥१४३॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—यदि सूर्य मीन, मेष, वृष इन राशियों पर हो, उस समय राहु का मुख ईशान कोण में; सूर्य मिथुन, सिंह, कर्क इन राशियों पर हो उस समय राहु का मुख वायुकोण में; सूर्य कन्या, वृश्चिक, तुला इन राशियों पर हो उस समय राहु का मुख नैऋत्य कोण में और सूर्य

धन, मकर, कुम्भ इन राशियों पर हो उस समय राहु का मुख अग्निकोण में रहता है। मन्दिरनिर्माता को राहु के मुख-भाग को छोड़कर पृष्ठ-भाग से नीव खुदवाना चाहिये।*

नींव खोदने तथा शिलान्यास आदि के नक्षत्र और वार।

अधोमुखैर्भैर्विदधीत खातं शिलास्तथैवोर्ध्वमुखैश्च पट्टम्।
तिर्यग्मुखैर्द्वारकपाटदानं गृहप्रवेशो मृदुभिर्ध्रुवर्क्षैः ॥१४५॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—अधोमुख संज्ञक नक्षत्रों में अर्थात् मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी, भरणी, मघा

---

* देवालये गेहविधौ जलाशये
राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे
खाते मुखात्पृष्ठविदिक्छुभा भवेत् ॥

—मुहूर्त्तचिन्तामणि की पीयूषधाराटीका पृ० ६६९

विशेष—दिशाओं में राहु का ज्ञान :—

धन, वृश्चिक, मकर के सूर्य में पूर्व दिशा में; कुम्भ, मीन, मेष के सूर्य में दक्षिण दिशा में; वृष, मिथुन, कर्क राशि के सूर्य में पश्चिम दिशा में और सिंह, कन्या, तुला राशि के सूर्य में उत्तर दिशा में राहु का मुख रहता है। —सम्पादक

और मंगल, बुध इन वारों में नीव खोदना श्रेष्ठ है[१]। इसी प्रकार ऊर्ध्व मुख संज्ञक नक्षत्रों में अर्थात् आर्द्रा, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिष, उत्तरात्रय (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद), रोहिणी तथा रविवार को शिल्यान्यास और नीव भरना शुभ है। तिर्यक् मुख संज्ञक नक्षत्रों में अर्थात् अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, रेवती, चित्रा, मृगशिर, आश्विनी इनमें द्वार के किवाड़ लगाना शुभ है।

मन्दिर-निर्माण के लिये मास-विचार

मार्गादिषु विचैत्रेषु मासेषूत्तरसंक्रमे।
व्यतीपातादियोगेन शुभेऽहनि प्रारभेत तत् ॥१४६॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—मार्गशीर्ष (अगहन), पौष, माघ, फाल्गुन, वैशाख इन महीनों में, उत्तरायण में, तथा व्यतीपातादि योगों से रहित शुभ दिनों में जिनालय-प्रारम्भ करना चाहिये।*

विशेष—नीव खोदने के लिये तिथियों का विचार निम्न प्रकार से करना चाहिये—रिक्ता तिथि (४।९।१४), अमावस्या तथा पूर्णिमा को नीव खोदना निषिद्ध है। शेष तिथियों में भी प्रतिपद, अष्टमी और षष्ठी को आवश्यक होने पर ही नीव खोदना चाहिये। —सम्पादक

* जन्मर्क्षमासतिथयो व्यतिपातभद्रा :
वैधृत्यमापितृदिनानि तिथिक्षयर्द्धी।
न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्धपात–
विष्कम्भवज्रघटिकात्रयमेव वर्ज्यम् ॥

मन्दिर-निर्माण के लिये नक्षत्रादि का विचार

पुष्योत्तरात्रयमृगश्रवणाश्विनीषु चित्राकयाहिवसुपाशि-विशाखिकासु । आर्द्रापुनर्वसुकरेष्वपि भेषु शस्तं जीवज्ञशुक्र-दिवसेषु सद्म ॥१४७॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—पुष्य, उत्तरात्रय (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा), मृगशिर, श्रवण, अश्विनी, चित्रा, पुनर्वसु, विशाखा, आर्द्रा, हस्त इन नक्षत्रों में तथा बृहस्पति, बुध और शुक्र इन दिनों में जिनालय-प्रारम्भ करना शुभ है ।*

विशेष—परिघार्धं पञ्च शूले षट् च गण्डातिगण्डयोः ।
व्याघाते नवनाड्यश्च वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु ॥

—मुहूर्त्तचिन्तामणि पृ० ४१

अर्थ—जन्मनक्षत्र, जन्ममास, जन्मतिथि, व्यतीपातयोग, भद्रा, वैधृति नाम का योग, अमावास्या, माता-पिता के मरने की तिथि, क्षयतिथि वृद्धितिथि, क्षयमास, अधिकमास, कुलिक, अर्द्धयाम, महापात, विष्कम्भ और वज्र के तीन तीन दण्ड सम्पूर्ण शुभ कार्यों में त्याज्य हैं। परिघ योग का पूर्वार्द्ध, शूलयोग के पाँच दण्ड, गण्ड और अति गण्ड के छः छः दण्ड और व्याघातयोग के नौ दण्ड मन्दिर निर्माण के लिये त्याज्य हैं।

* रोहिण्यां श्रवणे पुष्ये वारुणे चोत्तरात्रये ।
आर्द्रायां च धनिष्ठायां प्रारभेत जिनालयम् ॥

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

मन्दिर-निर्माण के लिये वार-सम्बन्ध से नक्षत्र-विचार

जीवेन चन्द्रहरिसर्पजलध्रुवाणि पुष्यं प्रशस्तमथतच्च-वसुद्विनाथाः। दस्रादिंकाशतपदाश्च सुभार्गवेन बाहोत्तरा-करकदाश्च बुधेन योगात् ॥१४८॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—बृहस्पति को मृगशिर, अनुराधा, आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा और ध्रुव संज्ञक नक्षत्र (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी), पुष्य; शुक्रवार को चित्रा, धनिष्ठा, विशाखा, अश्विनी,

---

अर्थ—रोहिणी, श्रवण, पुष्य, शतभिष, उत्तरात्रय, (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा), आर्द्रा, धनिष्ठा, इन नक्षत्रों में जिनालय-प्रारम्भ करना शुभ है।

जिनालय-निर्माण के मुहूर्त्त का चक्र

मास	माघ	फाल्गुन	वैशाख	ज्येष्ठ	मार्गशीर्ष	पौष
नक्षत्र	पु० उत्तराफा० उत्तराभा० उत्तराषा० मृग० श्र० अश्वि० चि० पुन० वि० आ० ह० ध० रो०					
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । ११ । १२ । १३					
वार	सोम० बुध० गुरु० शुक्र० रवि०					

आर्द्रा, शतभिष और बुध को अश्विनी, उत्तरात्रय, हस्त, रोहिणी ये नक्षत्र उत्तम हैं ।*

मन्दिर-निर्माण के लिये लग्न-विचार

मीनस्थे तनुगे कवावपि चतुर्थे कर्कगे गीष्पतौ रुद्रस्थे तुलगे शनावथ बलाधिक्ये सुतारायुजि । लग्नायां वरगेषु शुक्रतपनज्ञष्वामरे केंद्रगे षष्ठेऽर्के विदि सप्तमोऽग्निपु शनौ शस्तो जिनेंद्रालयः ॥१४६॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—मीन लग्न हो और उसी में बृहस्पति हो तो यह योग जिनालय बनवाने के लिये उत्तम है । लाभ-स्थान में अर्थात् लग्न से ग्यारहवें स्थान में तुला राशि का शनि हो और उसका बलवान् तारा के साथ योग हो तो यह योग भी मन्दिर निर्माण के लिये प्रशस्त है । लग्न, लग्न से ग्यारहवें और दशवें स्थान में क्रम से शुक्र, सूर्य और बुध हो, अथवा केन्द्रस्थान में (१।४।७।१०) बृहस्पति

---

* मूलारकि सवण ससि, मंगल उभद् बुध किरतीयं ।
गुरु पुणव्वसु पुप्फा, भिगु साई सनि सिद्धि जोगाणं ॥१८६॥

—ज्योतिष-सार

अर्थ—रविवार को मूल, सोमवार को श्रवण, मंगलवार को उत्तरा-भाद्रपद, बुधवार को कृत्तिका, गुरुवार को पुनर्वसु, शुक्रवार को पूर्वा-फाल्गुनी और शनिवार को स्वाति नक्षत्र हो तो सिद्ध योग होता है । यह योग मन्दिर बनवाने के लिये उत्तम है ।

हो और लग्न से छठवें स्थान में सूर्य, सातवें में बुध, त्रिकोण में अर्थात् लग्न से नवम और पंचम स्थान में शनि हो तो लग्न शुद्ध है।*

---

* लग्न देखने में विशेष यह है—

१२। ८। ६ और लग्न इन स्थानों में चन्द्रमा अशुभ है। अस्तगत ग्रह का लग्न और नवांश, पापग्रह से युक्त लग्न और नवांश, पापग्रह का नवांश, अष्टम में ग्रह, जन्मराशि, जन्मलग्न से अष्टम राशि और अष्टमेश लग्न में हों तो त्याज्य हैं।

केन्द्रस्थान (१।४।७।१०), त्रिकोणस्थान (५।९), इनमें शुभ ग्रह हों और तृतीय, षष्ठ, एकादश इन स्थानों में पाप ग्रह हों तो लग्न उत्तम है।

—सम्पादक

सिद्धच्छाया क्रमादर्कादिषु सिद्धिप्रदा पदैः।
रुद्र-सार्द्धाष्ट-नन्दाष्ट-सप्तभिश्चन्द्रवद्द्वयोः ॥१०३॥

—वास्तुसार

भावार्थ—यदि लग्न शुद्ध नहीं मिलती हो तो आवश्यक होने पर सिद्धच्छाया में जिनालय-प्रारम्भ किया जा सकता है। सिद्धच्छाया जानने का नियम निम्न प्रकार है—

जब अपने शरीर की छाया रविवार को ग्यारह, सोमवार को साढ़े आठ, मंगलवार को नौ, बुधवार को आठ, गुरुवार को सात, शुक्रवार को साढ़े आठ और शनिवार को साढ़े आठ पैर हो तब उसको सिद्धच्छाया कहते हैं। यह जिनालय-प्रारम्भ करने में सिद्धि-दायक है।

सूर्य-नक्षत्र-चक्र से शुभाशुभ का ज्ञान

सूर्याधिष्ठितभात् चतुर्भिरुपरिस्थैरष्टभिः कोणगैस्त-स्मादग्रिमभाष्टभिस्तत इतैर्भैर्वन्हिसंख्यैरलम् । देहल्यामथ तत्पुरः स्थितचतुर्भिर्भःकृते (?) चक्रके लक्ष्मीप्राप्तिरमानवं सुखकरं मृत्युः शिवं च क्रमात् ॥१५०॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—सूर्य के नक्षत्र से चार नक्षत्र तथा आगे के आठ नक्षत्र कोण में, उसके आगे के आठ नक्षत्र पार्श्व में, उसके आगे के तीन नक्षत्र देहली में और उसके आगे चार नक्षत्र चक्र में होते हैं। इनके फल क्रम से लक्ष्मी की प्राप्ति, शून्य, सुखदायक, मृत्युदायक और कल्याण-कारक ये होते हैं। अतः लग्न समय में सूर्य नक्षत्र से इस चक्र को बनाकर देख लेना चाहिये।*

प्रतिमा-निर्माण का मुहूर्त

उत्तराणां त्रये पुष्ये रोहिण्यां श्रवणे तथा।
वारुणे वा धनिष्ठायामार्द्रायां बिम्बनिर्मितिः ॥१८४॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

---

* सूर्य नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक गिनकर चक्र बना कर उसी के अनुसार फल जानना चाहिये। उदाहरण के लिये मान लिया कि श्रवण नक्षत्र में जिनालय बनवाना है और सूर्य इस समय विशाखा नक्षत्र पर है। अतः विशाखा से श्रवण तक गणना की तो श्रवण ७वाँ नक्षत्र पड़ा। इसलिये इसका वास कोण में हुआ और इसका फल लक्ष्मी की प्राप्ति हुआ। इसी प्रकार सब जगह समझना।

अर्थ—तीनों उत्तरा (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद), पुष्य, रोहिणी, श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा, आर्द्रा इन नक्षत्रों में और सोम, गुरु, शुक्र इन वारों में बिम्ब-निर्माण करना शुभ है।※

किसी २ आचार्य के मत से अश्विनी, हस्त, अभिजित्, मृगशिर, रेवती, अनुराधा तथा उपर्युक्त नक्षत्र भी लिये गये हैं।

प्रसन्नमनसा कारुं संतर्प्य पुष्पवाससैः।
ताम्बूलैर्द्रविणैर्यज्वा कारयेन्नेत्रहृत्प्रियम् ॥१८५॥
गुरुपुष्ये तथा हस्तार्यम्णि गर्भोन्सिवे शुभान्।
निमित्तान्नवलोक्येशप्रतिमानिर्मितिः शुभा ॥१८८॥

—जयसेन-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—पूजक अर्थात् प्रतिमा बनवाने वाला प्रसन्न मन से पुष्प, वस्त्र, ताम्बूल, दक्षिणा आदि के द्वारा शिल्पी को सन्तुष्ट करके चित्ता-

---

प्रतिमा-निर्माण के लिये चक्र

नक्षत्र	पु० रो० श्र० चि० ध० आ० अश्वि० उत्तफा० उत्तषा० उत्तभा० ह० मृ० रे० अनु०
वार	सोम० गुरु० शुक्र० (बुध भी लिया जाता है)
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । ११ । १३

कर्षक मनोज्ञ बिम्ब को गुरुपुष्य[1] और हस्तार्क[2] योग में तथा जिन भगवान् का बिम्ब बनाना हो उन भगवान् के गर्भ-कल्याणक दिन में शुभ निमित्तों को देखकर प्रतिमा-निर्माण करना शुभ है।

प्रतिष्ठा-मुहूर्त्त

पञ्चाङ्गतिथिसंशुद्धिर्लग्नं षड्वर्गगोचरम् ।
शुभाशुभनिमित्तं च लग्नशुद्धिस्तु पंचधा ॥ १, परि. १
वारास्तिथिभयोगाश्च करणं पंचधातिथि (?)
त्यक्त्वा कुजं रविं सौरिं वाराः सर्वेऽपि शोभनाः ॥ २, परि. १
सिद्धामृतादियोगेषु कुर्यात्तेष्वपि मंगलम् ।
त्यक्त्वा रिक्तामभावस्यां सर्वास्तु तिथयः शुभाः ॥ ३, परि. १
रिक्तास्वपि समाश्रित्य योगं कार्याणि कारयेत् ।
सिद्धियोगमपि प्राप्य सिनीवालीं विवर्जयेत् ॥ ४, परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—पञ्चाङ्गशुद्धि—तिथि, वार, नक्षत्र, योग, और करण; लग्नशुद्धि; षड्वर्गशुद्धि—गृह, होरा, द्रकाण, नवांश, द्वादशांश और

---

(१) बृहस्पतिवार को पुष्य नक्षत्र हो तो यह गुरुपुष्य योग कहलाता है। इसका दूसरा नाम अमृतसिद्धि योग भी है।

(२) रविवार को हस्त नक्षत्र हो तो यह हस्तार्क योग कहलाता है।

विशेष के लिये मुहूर्त्त चिन्तामणि पृ० १५२ देखें।

त्रिंशांश; गोचरग्रहशुद्धि और अन्य शुभाशुभ निमित्तों को देखकर क्रूर वारों को छोड़कर शेष वारों में प्रतिष्ठा करनी चाहिये। परन्तु क्रूरवार भी सर्वार्थसिद्धि[1] अमृत-सिद्धि[2] आदि योगों के होने पर प्रतिष्ठा में ग्राह्य हैं। रिक्ता (४।९।१४), अमावस्या, द्वादशी इनके

१— सर्वार्थसिद्धियोगचक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
हस्त	श्रवण	अश्विनी	रोहिणी	रेवती	रेवती	श्रवण
मूल	रोहिणी	उ०भा०पद	अनुराधा	अनुराधा	अनुराधा	रोहिणी
उत्तरात्रय	मृगशिर	कृत्तिका	हस्त	अश्विनी	अश्विनी	स्वाति
पुष्य	पुष्य	आश्लेषा	कृत्तिका	पुनर्वसु	पुनर्वसु	
अश्विनी	अनुराधा	...	मृगशिर	पुष्य	श्रवण	

२—रवि हत्थ सिय मिगसिर, मंगल अस्सणि य बुध अणुराहा।
गुरु पुक्ख सुक्करेवय, सनि रोहिणी जोग अमिता यं ॥४८॥

—ज्योतिषसार

अर्थ—रविवार को हस्त, सोमवार को मृगशिर, मंगलवार को अश्विनी, बुधवार को अनुराधा, गुरुवार को पुष्य, शुक्रवार को रेवती और शनिवार को रोहिणी नक्षत्र हो तो अमृतसिद्धि योग होता है।

विना शेष तिथियाँ शुभ हैं। किन्तु अमृतसिद्धि, सर्वार्थसिद्धि, आनन्द आदि शुभ योगों के होने पर रिक्ता भी प्रतिष्ठा में ग्रहण की गई हैं। परन्तु द्वादशी और चतुर्दशी युक्त अमावस्या सिद्धि योग के होने पर भी प्रतिष्ठा में शुभ नहीं हैं।※

प्रतिष्ठा के लिये नक्षत्र

पुनर्वसूत्तरापुष्यहस्तश्रवणरेवती-
रोहिण्यश्विमृगर्क्षेषु प्रतिष्ठां कारयेत्सदा। ५, परि. १
चित्रास्वातिमघामूले भरण्यां तदभावतः।
नक्षत्रेष्ववशेषेषु प्रतिष्ठां नैव कारयेत्॥ ६ परि. १

— वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—पुनर्वसु, उत्तरात्रय (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा), पुष्य, हस्त, श्रवण, रेवती, रोहिणी, अश्विनी, मृगशिर इन

※ हस्त नक्षत्र रविवार पंचमी को, मृगशिर सोमवार षष्ठी को, अश्विनी मंगलवार सप्तमी को, अनुराधा बुधवार अष्टमी को, पुष्य गुरुवार नवमी को, रेवती शुक्रवार दशमी को, रोहिणी शनिवार एकादशी को पड़े तो ये प्रतिष्ठा में त्याज्य हैं। क्योंकि इन तिथि, वार और नक्षत्रों के सम्बन्ध से विषयोग बन जाता है।

—सम्पादक

नक्षत्रों में प्रतिष्ठा करना शुभ है। ❀

यदि वार, तिथि, योग आदि इन नक्षत्रों में शुद्ध न हों तो चित्रा, स्वाति, मघा, मूल, भरणी इन नक्षत्रों में भी शुभ योगों के होने पर प्रतिष्ठा की जा सकती है। शेष नक्षत्र प्रतिष्ठा के लिये अशुभ हैं।†

❀ मह मिअसिर हत्थुत्तर अनुराहा रेवई सवण मूलं।
पुस्स पुणव्वसु रोहिणि साइ धणिट्ठा पइठाए ॥१८॥

—वास्तुसार

अर्थ—मघा, मृगशिर, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, अनुराधा, रेवती, श्रवण, मूल, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी, स्वाति और धनिष्ठा ये नक्षत्र प्रतिष्ठा में शुभ हैं।

† जयसेनाचार्य के मत से प्रतिष्ठा के लिये उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, श्रवण रेवती ये नक्षत्र उत्तम कहे गये हैं। रोहिणी और अश्विनी में भी शुभ योग के होने पर प्रतिष्ठा हो सकती है। चित्रा, मघा, भरणी, मूल, इन नक्षत्रों में भी आवश्यक होने पर प्रतिष्ठा की जा सकती है। कल्याण का नक्षत्र भी प्रतिष्ठा में लिया गया है।

विशेष—बिम्ब-प्रतिष्ठा करने वाले को अपना जन्मनक्षत्र, दसवाँ, सोलहवाँ, अठारहवाँ, तेवीसवाँ और पचीसवाँ ये नक्षत्र बिम्बप्रतिष्ठा में छोड़ने चाहिये।

प्रतिष्ठा के लिये तिथि-विचार

सियपक्खे पडिवय बीअ पंचमी दसमि तेरसी पुण्णा।
कसिणे पडिवय बीआ पंचमि सुहया पइट्ठाए ॥१०॥

—वास्तुसार

अर्थ—शुक्लपक्ष की एकम, दूज, पंचमी, दशमी, तेरस और पूर्णिमा तथा कृष्णपक्ष की एकम, दूज, पंचमी ये तिथियाँ प्रतिष्ठा कार्य में शुभदायक मानी हैं।

प्रतिष्ठा के लिये तिथि-नक्षत्र-बोधक चक्र

समय	उत्तरायण के सूर्य में; बृहस्पति, शुक्र, मंगल के बलवान् होने पर
तिथि	शुक्लपक्ष की १।२।५।१०।१३।१५ और कृष्णपक्ष की १।२।५
नक्षत्र	पु० उत्तरात्रय० ह० रे० रो० अश्वि० मृ० श्र० ध० पुन० । मतान्तर से—चि० स्वा० म० मू० (आवश्यक होने पर)
वार	शु० बु० गु० सो०
लग्न-शुद्धि	शुभग्रह १।४।७।५।६।१० में शुभ हैं पापग्रह ३।६।११ में शुभ हैं और लग्न २।३।५।६।८।६।११।१२ शुभ स्वामी से दृष्ट होने पर किन्तु पांच शुभ ग्रह होने पर ही लग्न ग्राह्य है।

त्याज्य प्रकरण

आद्याः पंच परित्याज्या नामतो विष्कम्भशूलयोः ।
व्याघाते नव वज्रे च षट् च गण्डातिगण्डयोः ॥७,परि.१
परिघं सव्यतोपातं समस्तं परिवर्जयेत् ।
आद्यंतौ वैधृतेः पादौ त्याज्यौ मध्यौ शुभप्रदौ ॥ ८, परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—विष्कम्भ और शूल योग में आदि की पाँच घटी; व्याघात और वज्र में नव घटी; गण्ड और अति गण्ड की छह घटी त्याज्य हैं। परिघ और व्यतीपात की तो सब घटियाँ त्याज्य हैं[1] । वैधृति योग का पहिला और अन्तिम का अंश त्याज्य है; परन्तु मध्य के दोनों अंश शुभ हैं ।[1]

---

१ जिस लग्न या जिस नवांश में पापग्रह हों वह लग्न अथवा नवांश, ग्रहण के पहिले तीन दिन और ग्रहण के बाद ७ दिन, उत्पात, ग्रह जिस नक्षत्र को कुचल देवे उसे ६ महीना, जिसमें ग्रहों का युद्ध हो उस नक्षत्र को ६ महीना और उत्पात जिस नक्षत्र में हुआ हो उसे ६ महीना प्रतिष्ठा में त्यागना चाहिये ।

कर्त्ता का नक्षत्र, जन्ममास, जन्मतिथि, व्यतिपात, भद्रा, वैधृति, अमावस्या, क्षयतिथि, अधिकमास, कुलिक, अर्धयाम, पातयोग, विष्कम्भ और वज्र में तीन २ घटी, नीच के बृहस्पति में एकमास, शुक्रास्त और विषघटी का त्याग करना चाहिये ।

मध्यम विषघटी का मान निम्नलिखित है और उसे स्पष्ट गणित से जाना चाहिये ।

प्रतिष्ठादिषु कार्येषु शेषयोगाः शुभप्रदाः ।
विशेषोत्पातयोगाश्च वर्जनीया दिनत्रयम् । ६ परि. १

अश्विनी में ५० घटी के उपरान्त ४ घटी, रोहिणी में ४० के पश्चात् ४ घटी, मृगशिर में १४ के बाद ४ घटी, पुनर्वसु में ३० घटी के बाद ४ घटी, पुष्य में २० घटी के अनन्तर ४ घटी, उत्तराफाल्गुनी में १८ घटी के बाद ४ घटी, हस्तमें २१ घटी के उपरान्त ४ घटी, उत्तराषाढ़ा में २० घटी के उपरान्त ४ घटी, श्रवण में १० घटी के पश्चात् ४ घटी, उत्तराभाद्रपद में २४ घटी के उपरान्त ४ घटी, रेवती में ३० घटी के उपरान्त ४ घटी विषघटी होती है । यह विषघटी का मध्यम मान कहा गया है ।

स्पष्ट करने का नियम

उपर्युक्त स्वस्थध्रुवा को नक्षत्र की भभोग घटी से गुणा कर ६० का भाग देने से लब्ध स्पष्ट ध्रुवा होगा । इसी प्रकार ४ को भभोग घटी से गुणा कर ६० का भाग देने से स्पष्ट विषघटी का प्रमाण होगा ।

उदाहरण–मृगशिर का मान ५६ घटी ४२ पल है, इसलिये मृगशिर के ध्रुवा १४ को भभोग (नक्षत्रमान) ५६।४२ गुणा किया तो ७९३ घटी ४८ पल हुआ । इसमें ६० का भाग दिया तो लब्ध १३ घटी १३ पल ४८ विपल स्पष्ट ध्रुवा हुआ । ४ को भभोग से गुणा किया तो २२६।४८ इसमें ६० का भाग देने से ३ घटी ४६ पल ४८ विपल स्पष्ट विषघटी हुई । अर्थात् मृगशिर के १३ घटी १३ पल ४८ विपल के उपरान्त ३ घटी ४६ पल ४८ विपल तक विषघटी मानी जायगी । परन्तु चन्द्रमा शुभ राशि में हो या शुभ मित्र से देखा जाता हो वा स्वनवांश में हो अथवा ५।१।४।७।१० इन स्थानों में हो तो विषघटी के दोष को दूर करता ।

स्थिराणि विष्टियुक्तानि वर्जनीयानि सर्वदा।
शुभानि चरसंज्ञानि करणानि बवादितः ॥१० परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—विष्कम्भ आदि त्याज्य योगों को छोड़कर शेष योग प्रतिष्ठा में उत्तम हैं। उत्पात में तीन दिन तथा स्थिर करण और भद्रा (विष्टि) त्याज्य हैं। शेष चरसंज्ञक करण अर्थात् बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज ये सात शुभ हैं।

जयसेनाचार्य के मत से क्रूरासन्न, दूषित, उत्पात, लता[1], विद्ध, पात,[2] राशिवेध, नक्षत्रवेध, युति,[3] बाणपंचक, जामित्र ये प्रतिष्ठा में त्याज्य हैं। इसी प्रकार सूर्यदग्धा[4] और चन्द्रदग्धा तिथि भी प्रतिष्ठा में त्याज्य हैं।

---

१ सूर्यादि ग्रह अपने स्थित नक्षत्र से १२,७,३,२२,६,२४,८,२० इन नक्षत्रों को लात मारते हैं।

२ हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतीपात, गण्ड और शूल इन योगों के अन्त में जो नक्षत्र हो उसमें पात दोष होता है।

३ चन्द्रमा बुध और गुरु को छोड़कर अन्य ग्रहों के साथ हो तो युतिदोष कहलाता है।

४ सूर्यदग्धातिथियंत्र।

धनु-मीन संक्रान्ति में	२	मिथुन-कन्या संक्रान्ति में	८
वृष-कुंभ ,,	४	सिंह-वृश्चिक ,,	१०
मेष-कर्क ,,	६	तुला-मकर ,,	१२

सिद्धियोग का लक्षण

अष्टमी रविणा सिद्धा नवमी शशिना युता।
मंगलेनाष्टमी षष्ठी तृतीया च त्रयोदशी ॥११, परि. १
बुधेन द्वादशी सिद्धा द्वितीया सप्तमी तथा।
गुरुणा पंचमी युक्ता दशम्येकादशी तथा ॥१२, परि. १
शुक्रेणैकादशी षष्ठी प्रतिपच्च त्रयोदशी।
शशिना नवमी सिद्धा चतुर्थी च चतुर्दशी ॥१३, परि. १*

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

चंद्रदग्धातिथियंत्र

कुंभ-धन के चन्द्र में	२	मकर-मीन के चन्द्र में	८
मेष-मिथुन के ,,	४	वृष-कर्क के ,,	१०
तुला-सिंह के ,,	६	वृश्चिक-कन्या के ,,	१२

* तिथिवारसिद्धियोगज्ञापकयंत्र

वार	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
तिथि	८	६	३	२	५	१	४
			८	७	१०	६	६
			६	१२	१५	११	१४
			१३			१३	

अर्थ—रविवार को अष्टमी; सोमवार को नवमी; मंगलवार को अष्टमी, षष्ठी, तृतीया, त्रयोदशी; बुधवार को द्वादशी, द्वितीया, सप्तमी; बृहस्पतिवार को पंचमी, दशमी, एकादशी; शुक्रवार को एकादशी, षष्ठी, प्रतिपद, त्रयोदशी और शनिवार को नवमी, चतुर्थी, चतुर्दशी सिद्धि देने वाली कही गयी हैं।

जयसेनाचार्य के मत से रविवार को अष्टमी; सोमवार को नवमी; बुधवार को द्वादशी, द्वितीया; गुरुवार को पंचमी, दशमी, पूर्णिमा; शुक्रवार को एकम, षष्ठी और शनिवार को चतुर्थी, नवमी सिद्धि देनेवाली कही गयीं हैं।

त्याज्य नक्षत्र

सूर्याद्भरणीं चित्रां विश्वदेवं धनिष्ठभं।
उत्तराफाल्गुनीं ज्येष्ठां रेवतीं जन्मभं त्यजेत्॥ १४, परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगल को उत्तराषाढ़ा, बुध को धनिष्ठा, बृहस्पति को उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवार को ज्येष्ठा और शनिवार को रेवती त्याज्य है। और कर्त्ता का जन्म-नक्षत्र, जन्मलग्न, जन्मराशि और जन्ममास:भी त्याज्य हैं।

त्याज्य नक्षत्रबोधक चक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
भरणी	चित्रा	उत्तषा०	धनिष्ठा	उत्तफा०	ज्येष्ठा	रेवती

दग्धा तिथि

षष्ठीं कर्कटके मेषे चापे मीने द्वितीयकां ।
चतुर्थीं वृषभे कुम्भे दशमी सिंहवृश्चिके ॥१५, परि. १
युग्मेऽष्टमीं च कन्यायां द्वादशीं मकरे तुले ।
दहत्यर्को यतस्तस्माद्वर्जनीया इमाः सदा ॥ १६, परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—मेष और कर्क राशि के सूर्य में षष्ठी, मीन और धन के सूर्य में द्वितीया, वृष और कुम्भ के सूर्य में चतुर्थी, कन्या और मिथुन के सूर्य में अष्टमी, सिंह और वृश्चिक के सूर्य में दशमी, मकर और तुला के सूर्य में द्वादशी तिथि दग्धा संज्ञक कही गयी है।

अमृतसिद्धि योग

हस्तः पुनर्वसुः पुष्यो रविणा चोत्तरात्रयम् ।
पुष्यश्च गुरुवारेण शशिना मृगरोहिणी ॥ १७, परि. १
अश्विनी रेवती भौमे शुक्रे श्रवणरेवती ।
विशाखा कृत्तिका मन्दे रोहिणी श्रवणस्तथा ॥ १८, परि. १
मैत्रवारुणनक्षत्रं बुधवारेण संयुतम् ।
अमृताख्या इमे योगाः प्रतिष्ठादिषु शोभनाः ॥१९, परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—रविवार को हस्त, पुनर्वसु, पुष्य; गुरुवार को उत्तरात्रय (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद), पुष्य; सोमवार को मृगशिर, रोहिणी; मंगलवार को अश्विनी, रेवती; शुक्रवार को श्रवण

रेवती; शनिवार को विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, श्रवण और बुधवार को अनुराधा, शतभिष नक्षत्र अमृत्त-सिद्धि योग संज्ञक हैं।

अमृत-सिद्धि योगबोधक चक्र

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
ह० पुन० पु०	मृग० रो०	अश्वि० रे०	अनु० श०	उत्तभा० उत्तफा० उत्तषा० पु०	श्र० रे०	वि० कृ० रो० श्र०

उत्पात-मृत्यु-काण-सिद्धि योग का लक्षण

विशाखादिचतुष्कैश्च युतैः सूर्यादिभिः क्रमात्।
उत्पातमृत्युकाणयोगाख्यसिद्धियोगाः प्रकीर्त्तिताः २० परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—रविवार को विशाखा उत्पात; अनुराधा मृत्यु; ज्येष्ठा काण; मूल सिद्धि; सोमवार को पूर्वाषाढ़ा उत्पात; उत्तराषाढ़ा मृत्यु; अभि-जित् काण; श्रवण सिद्धि; मंगलवार को धनिष्ठा उत्पात; शतभिष मृत्यु; पूर्वाभाद्रपद काण; उत्तराभाद्रपद सिद्धि; बुधवार को रेवती उत्पात; अश्विनी मृत्यु; भरणी काण; कृत्तिका सिद्धि; गुरुवार को रोहिणी उत्पात; मृगशिर मृत्यु; आर्द्रा काण; पुनर्वसु सिद्धि; शुक्रवार को पुष्य उत्पात; आश्लेषा मृत्यु; मघा काण; पूर्वाफाल्गुनी सिद्धि; और शनिवार को उत्तराफाल्गुनी उत्पात; हस्त मृत्यु; चित्रा काण; स्वाति

सिद्धि योग संज्ञक होते हैं।*

नक्षत्रदोषों का विचार

क्रूरग्रहेण संयुक्तं तस्यासन्नं च यद्भवेत्।
उत्पातदूषितं यच्च ग्रहविद्धं च लत्तितम् ॥२८ परि. १
सूर्यादिदोषदुष्टं च पर्वासन्नं च यातितम्।
उपग्रहेण संयुक्तं वर्जनीयं प्रयत्नतः ॥२९ परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—क्रूरग्रहस्थित नक्षत्र, क्रूरग्रहासन्न नक्षत्र, उत्पातदोष दूषित नक्षत्र, ग्रहवेधित नक्षत्र, लत्तित नक्षत्र, सूर्यादि दोष दूषित नक्षत्र, पर्वासन्न नक्षत्र और उपग्रह अर्थात् राहु केतु स्थित नक्षत्र

---

* उत्पात-मृत्यु-काण-सिद्धि-योगबोधक चक्र

वार	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उत्पात	वि०	पूषा०	ध०	रे०	रो०	पु०	उभा०
मृत्यु	अनु०	उषा०	श०	अश्वि०	मृ०	अश्वि०	ह०
काण	ज्ये०	अभि०	पूभा०	भ०	आ०	म०	चि०
सिद्धि	मू०	श्र०	उभा०	कृ०	पुन०	पूफा०	स्वा०

प्रतिष्ठा में त्यागना चाहिये।*

यदि प्रतिष्ठा के नक्षत्र पर रवि, मंगल और शनि ग्रह हो तो प्रतिष्ठा का नक्षत्र क्रूरग्रह स्थित नक्षत्र कहलाता है। यह प्रतिष्ठा में त्याज्य है।

उत्पात दोष से यहाँ पर पात दोष ग्रहण करना चाहिये। हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतिपात, गण्ड, शूल इन योगों के अन्त में जो नक्षत्र हो उसमें पात दोष कहलाता है।

वेधदोष का विचार

क्रूरग्रहकृतं नित्यं राशिवेधं विवर्जयेत्।
सर्वग्रहकृतं शेषं त्रिप्रकारं विवर्जयेत्॥ ३१ परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—क्रूरग्रह के द्वारा किये गये राशिवेध को अवश्य ही त्यागना चाहिये। शेष तीन प्रकार के वेध (नक्षत्रवेध, द्रेष्काणवेध,

---

* नक्षत्रशुद्धि देखने के लिये निम्नलिखित प्रधान सात दोषों का त्याग करना चाहिये।

(१) क्रूरग्रहयुति (२) उत्पात (३) वेध (४) लत्ता (५) दग्धातिथि (६) उपग्रह (७) क्रान्तिसाम्य

—सम्पादक

राहुवेध) सभी ग्रहों के त्याज्य हैं ।*

स्वस्थानाद्गुरुणा षष्ठं मंगलेन तृतीयकम् ।
सूर्येण द्वादशं धिष्ण्यं शनिना दूरतोऽष्टमम् ॥ ३२ परि. १

* नक्षत्र-वेध विचार
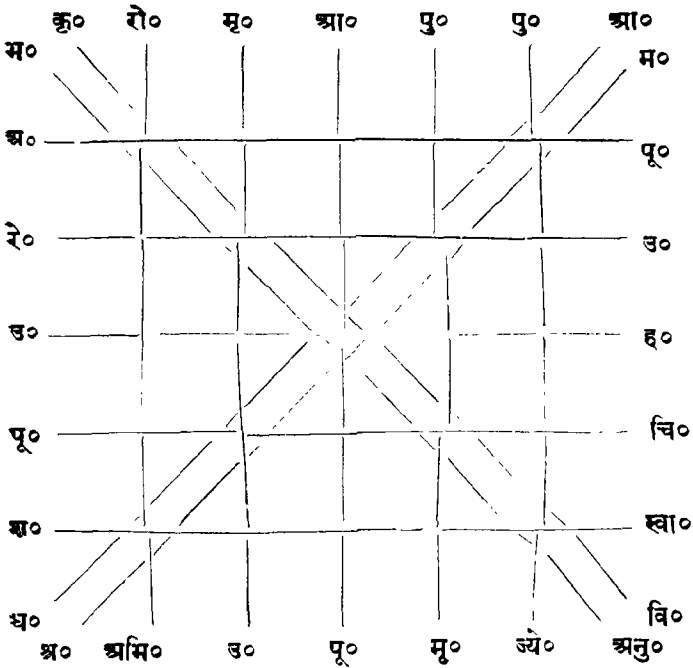
इस चक्र के अनुसार सम्मुख नक्षत्रों का वेध जानना चाहिये । जैसे कृत्तिका का विशाखा के साथ और रोहिणी का अभिजित् के साथ में वेध है । प्रतिष्ठा में वेध नक्षत्र छोड़ना चाहिये ।

राहुणा नवमं पश्चाद्ध्रुवं शुक्रेण पंचमम् ।
द्वाविंशं पूर्णचन्द्रेण सप्तमं ज्ञेन लक्षितम् ॥ ३३ परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—गुरु अपने नक्षत्र से छठवे नक्षत्र को, मंगल अपने नक्षत्र से तीसरे नक्षत्र को, सूर्य अपने नक्षत्र से बारहवे नक्षत्र को और शनि अपने नक्षत्र से आठवे नक्षत्र को लात मारता है। परन्तु यहाँ इतना विशेष है कि ये ग्रह अपने से आगे वाले नक्षत्रों को ही

द्रेष्काण-वेध विचार
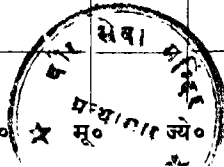
लात मारते हैं, पिछले नक्षत्रों को नहीं।

चन्द्रमा अपने से बाईसवे पिछले नक्षत्र को, राहु अपने से नौवे पिछले नक्षत्र को, बुध अपने से सातवे पिछले नक्षत्र को और शुक्र अपने से पाँचवे पिछले नक्षत्र को लात मारता है। जैसे सूर्य यदि अश्विनी नक्षत्र पर है तो वह अपने से आगे वाले आठवे पुष्य नक्षत्र को तथा शुक्र यदि उत्तराभाद्रपद नक्षत्र पर है तो वह अपने से पीछे वाले पांचवे श्रवण नक्षत्र को लात मारेगा। अतः पुष्य और श्रवण शुभ होते हुए भी लत्तित-अवस्था में त्याज्य होंगे।

इस चक्र के अनुसार भी सम्मुख नक्षत्रों का द्रेष्काण वेध जानना चाहिये। जैसे ज्येष्ठा पुष्य का, भरणी मघा का, अश्विनी पूर्वाफाल्गुनी का और मृगशिर उत्तराषाढ़ा का वेध होता है।

विशेष—राशिवेध सभी ग्रह अपनी राशि से सातवी राशि को वेध करते हैं। जैसे सूर्य मेष राशि पर है तो वह अपने से आगे वाली सातवी राशि तुला को वेध करेगा। परन्तु प्रतिष्ठा में केवल क्रूरग्रह से विद्ध राशि का ही त्याग किया जायगा।

पादवेध—प्रथम चरण का चतुर्थ चरण के साथ में और द्वितीय चरण का तृतीय चरण के साथ में वेध होता है। जैसे कोई ग्रह कृत्तिका के प्रथम चरण पर है तो वह श्रवण के चौथे चरण को वेध करेगा। अथवा कोई ग्रह कृत्तिका के द्वितीय चरण में है तो वह श्रवण के तृतीय चरण को वेध करेगा। प्रतिष्ठा में यह पादवेध भी त्याज्य है।

—सम्पादक

उपग्रहदोष का लक्षण

सूर्याधिष्ठितनक्षत्रात्पंचमश्च चतुर्दशम् ।
अष्टादशं त्रयोविंशमथाष्टक[मुदाहृत]म् (?) ॥ ३६परि.१
द्वाविंशं च चतुर्विंशमुपग्रहयुतं त्यजेत् ।
एवं निर्दोषनक्षत्रे प्रतिष्ठां कारयेद्बुधः ॥ ३७ परि. १

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गणना कर यदि पांचवाँ, चौदहवाँ, दशवाँ, अठारहवाँ, तेईसवाँ, बाईसवाँ, चौवीसवाँ, पच्चीसवाँ ये नक्षत्र आवें तो उपग्रह दोष होता है। यह दोष प्रतिष्ठा में त्याज्य है।

प्रतिष्ठा में बाणदोष का त्याग भी किसी किसी आचार्य के मत में लिया गया है। इसके जानने का तरीका निम्नप्रकार है—जिस दिन बाण का विचार करना हो, उस दिन शुक्लपक्ष की प्रतिपद् से बीती हुई सब तिथियों को गिन के वर्त्तमान दिन तक जोड़े और नौ का भाग देवे। यदि आठ बचे तो रोगबाण, दो बचे तो अग्निबाण, चार बचे तो राजबाण, छः बचे तो चौरबाण और एक बचे तो मृत्युबाण जानना। इस प्रकार नक्षत्रों के दोषों का विचार कर निर्दोष नक्षत्र में ही प्रतिष्ठा करनी चाहिये।

लग्न के बलाबल का विचार

तृतीयैकादशे षष्ठे कुजराहुशनिश्चराः ।
लग्नतः शोभनाः सूर्यः प्रोक्तेषु दशमेऽपि च ॥३८परि० २

अष्टमं द्वादशं त्यक्त्वा बुधः शेषेषु शोभनः ।
षष्ठाष्टमं तृतीयान्त्यं त्यक्त्वा सुरगुरुः शुभः ॥३९परि०२

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—मंगल, राहु और शनिश्चर लग्न से तीसरे, ग्यारहवे और छटवे स्थान में शुभ हैं। सूर्य लग्न से तीसरे, छटवे, ग्यारहवे और दशवे स्थान में शुभ है। बुध लग्न से आठवे और बारहवे स्थान को छोड़कर शेष स्थानों में शुभ है। इसी प्रकार बृहस्पति छटवे, आठवे, तीसरे और बारहवे स्थान को छोड़कर शेष स्थानों में शुभ है।

षट्सप्तमदशाष्टान्त्यं त्यक्त्वा शुक्रः शुभप्रदः ।
तृतीयैकादशे स्थाने द्वितीये च शुभः शशी ॥४० परि० २
पंचादिषु सचन्द्रेषु लग्नमिष्टेषु शोभनम् ।
दृष्टेषु षट्सु नो इष्टः शुक्लपक्षेऽस्तगः शशी ॥४१ परि० २

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—शुक्र छटवे, सातवे, दशवे, आठवे और बारहवे स्थान को छोड़कर शेष स्थानों में शुभ होता है। इष्ट लग्न में चन्द्रमा सहित अन्य पांच ग्रह शुभ हों तो लग्न शुभ है।

जयसेनाचार्य के मत से उदयगत बलवान् चन्द्रमा तीसरे, दूसरे और ग्यारहवे स्थान में शुभ है। यदि चन्द्रमा अस्त और हीनबल हो तो ताराबल का विचार करना चाहिये। इनमें तीसरी,

पांचवी और सातवी तारा शुभ नहीं है, शेष ताराएं शुभ हैं। ❀

षडवर्ग शुद्धि

सद्ग्रहस्य गृहं होरा द्रेष्काणो द्वादशांशकः।
त्रिंशद्भागो नवांशश्चेति षड्वर्गगः शुभः (?)॥४२ परि० २

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—शुभग्रह की राशि, होरा, द्रेष्काण, द्वादशांश, त्रिंशांश और नवांश प्रतिष्ठा में शुभ हैं।

भावार्थ—बुध, गुरु, शुक्र और चन्द्र इन ग्रहों की राशियाँ शुभ होती हैं। ग्रहों की राशियों का विचार निम्नप्रकार से करना चाहिये। मंगल मेष और वृश्चिक का, शुक्र वृष और तुला का, बुध कन्या और मिथुन का, चन्द्रमा कर्क का, शनि कुम्भ और मकर का, गुरु धन और मीन का और सूर्य सिंह का स्वामी होता है।

❀ नारचन्द्र के मत मे तारा का विचार निम्नप्रकार है—जन्म नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिन कर नौ का भाग देकर शेष को तारा जानना। इसका फल एक शेष में शान्ता, दो में मनोहरा, तीन में क्रूरा, चार में विजया, पांच में कुलोद्भवा, छः में पद्मिनी, सात में राक्षसी, आठ में बाला और नौ में आनन्दी तारा होती है।

उदाहरण—जैसे रमेशचन्द्र के नाम से श्रवण नक्षत्र में प्रतिष्ठा करनी हो तो इनके जन्म नक्षत्र स्वाति से श्रवण तक गिनने पर आठ नक्षत्र हुए, इनमें नौ का भाग दिया तब आठ ही शेष रहा। यह आठवीं बाला नाम की तारा उत्तम है।

होराविचार—विषम राशि में १५ अंश तक सूर्य की होरा पश्चात् १६ से ३० अंश तक चन्द्रमा की होरा होती है। इसी प्रकार सम राशि में १५ अंश तक चन्द्रमा की होरा पश्चात् १६ से ३० अंश तक सूर्य की होरा रहती है।*

द्रेष्काणविचार—प्रथम द्रेष्काण उसी राशीश का, द्वितीय द्रेष्काण उस राशि से पंचम राशीश का, तृतीय द्रेष्काण उस राशि से नवम राशीश का होता है।

उदाहरण—जैसे मेष राशि के २१ अंश २५ कला का द्रेष्काण मालूम करना हो तो प्रथम १० अंश तक मंगल का द्रेष्काण रहा। इसके अनन्तर ११ से २० अंश तक सूर्य का और २० अंश के पश्चात् गुरु का द्रेष्काण हुआ। अतः २१ अंश २५ कला का द्रेष्काण

---

* होराचक्र

राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
१५ अंश	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०
१५से ३०तक	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०	चं०	सू०

गुरु का आवेगा। इसी प्रकार सब जगह समझना चाहिये।*

त्रिंशांशविचार—सम राशियों में शुक्र, बुध, गुरु, शनि और मंगल इन पाँचों ग्रहों का पाँच, सात, आठ, पाँच, पाँच अंश तक क्रम से त्रिंशांश समझना चाहिये। जैसे शुक्र सम राशियों में पाँच अंशों का स्वामी, बुध आगे वाले सात अंशों का स्वामी, गुरु इससे आगे वाले आठ अंशों का स्वामी, शनि इससे आगे वाले पांच अंशों का स्वामी और मंगल इससे आगे वाले पाँच अंशों का स्वामी होता है। किन्तु विषम राशियों में विपरीत स्वामी समझने चाहिये। जैसे प्रथम पाँच अंशों का स्वामी मंगल, इससे आगे वाले पाँच अंशों का स्वामी शनि, इससे आगे वाले आठ अंशों का स्वामी गुरु, इससे आगे वाले सात अंशों का स्वामी बुध और इससे आगे

* द्रेष्काण चक्र

राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
प्रथम द्रेष्काण राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
१० अंश तक के स्वामी	मं०	शु०	बु०	चं०	सू०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	श०	गु०
द्वितीय द्रेष्काण राशि	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०
२० अंश तक के स्वामी	सू०	बु०	शु०	मं०	बु०	श०	श०	गु०	मं०	शु०	बु०	चं०
तृतीय द्रेष्काण राशि	ध०	म०	कुं०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०
३० अंश तक के स्वामी	वृ०	श०	श०	गु०	मं०	शु०	बु०	चं०	सू०	बु०	शु०	मं०

वाले पाँच अंशों का स्वामी शुक्र होता है।*

द्वादशांशविचार—एक राशि में १२ द्वादशांश होते हैं। प्रत्येक द्वादशांश का मान २ अंश ३० कला है। जिस राशि में द्वादशांशों का विचार करना हो, उसी राशि से लेकर क्रम से १२ राशियों के

* विषम त्रिंशांश चक्र

अंश	मे०	मि०	सिं०	तु०	ध०	कुं०	राशि
५	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०	स्वामी
५	श०	श०	श०	श०	श०	श०	स्वामी
८	बृ०	बृ०	बृ०	बृ०	बृ०	बृ०	स्वामी
७	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	स्वामी
५	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	स्वामी

सम त्रिंशांश चक्र

अंश	वृ०	क०	क०	वृ०	म०	मी०	राशि
५	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	स्वामी
७	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	स्वामी
८	बृ०	बृ०	बृ०	बृ०	बृ०	बृ०	स्वामी
५	श०	श०	श०	श०	श०	श०	स्वामी
५	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०	स्वामी

द्वादशांश होते हैं। जैसे मेष में पहिला द्वादशांश मेष का, दूसरा वृष का, तीसरा मिथुन का, चौथा कर्क का, पाँचवाँ सिंह का, छटवाँ कन्या का, सातवाँ तुला का, अठवाँ वृश्चिक का, नौवाँ धन का, दशवाँ मकर का, ग्यारहवाँ कुम्भ का और बारहवाँ मीन का होता है। इसी प्रकार सभी राशियों में द्वादशांश जानने चाहिये।*

* द्वादशांश चक्र

अंश	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	लग्न
२।३०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	ग्रह
५।०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	ग्रह
७।३०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	ग्रह
१०।०	४ चं	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	ग्रह
१२।३०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	ग्रह
१५।०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	ग्रह
१७।३०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	ग्रह
२०।०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	ग्रह
२२।३०	९ गु०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	ग्रह
२५।०	१० श०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	ग्रह
२७।३०	११ श०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	ग्रह
३०।०	१२ गु०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ गु०	१० श०	११ श०	ग्रह

नवांश-विचार—एक राशि में नौ नवांश होते हैं और प्रत्येक नवांश का मान ३ अंश २० कला होता है। मेष में मेष से, वृष में मकर से, मिथुन में तुला से, कर्क में कर्क से, सिंह में मेष से, कन्या में मकर से, तुला में तुला से, वृश्चिक में कर्क से, धन में मेष से, मकर में मकर से, कुम्भ में तुला से और मीन में कर्क से नवांश की गणना करनी चाहिए। इस प्रकार षड्वर्ग की शुद्धि देखकर ही प्रतिष्ठा में लग्न लेनी चाहिये।*

*** नवांश चक्र**

अंशादि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
३।२०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०
६।४०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०
१०।०	मि०	मी०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०	क०
१३।२०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०
१६।४०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०
२०।०	क०	मि०	मी०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०
२३।२०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०	तु०	क०	मे०	म०
२६।४०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०	वृ०	सिं०	वृ०	कुं०
३०।०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०	क०	मि०	मी०	ध०	क०	मि०	मी०

उदाहरण—जैसे प्रतिष्ठा के लिये लग्नमान ५।११।१०।१४ है, इसमें षड्वर्ग का विचार करना हो तो कन्या लग्न होने से कन्या का स्वामी बुध है, अतः बुध का गृह हुआ। लग्न सम राशि १५ अंश के भीतर है अतः प्रथम होरा चन्द्रमा की हुई। नवांश का मान ३।२० होता है इस हिसाब से उपर्युक्त लग्न में ४था नवांश हुआ। परन्तु कन्या लग्न होने से नवांश की गणना मकर से की तो मेष का नवांश आया और इसका स्वामी मंगल हुआ। अतः इस लग्न में मंगल का नवांश होगा। द्रेष्काण का मान १० अंश होता है, इसलिये उपर्युक्त लग्न दूसरे द्रेष्काण में है। अतः कन्या से पञ्चम राशीश शनि का द्रेष्काण जानना चाहिये। द्वादशांश का मान २।३० होता है, इस हिसाब से अभीष्ट लग्न के अंशों में ५वाँ खण्ड आया। इसकी गणना कन्या से की तो पञ्चम राशीश शनि हुआ। यही शनि इस लग्न का द्वादशांशेश कहलायेगा। और इस लग्न में त्रिशांश बुध का आया। इसी प्रकार सब जगह षड्वर्ग बना लेना चाहिये।

शुभग्रहगृहाभावे पंचवर्गोऽपि शस्यते ।
येष्वंशेषु भवेत्सोऽपि तान्वच्चेऽहं समासतः ॥४३ परि० २

— वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—यदि शुभ ग्रह का गृह नहीं हो तो पंचवर्ग भी शुभ होता है। परन्तु शुभ ग्रह के गृहाभाव में लग्नों के जो अंश निश्चित किये गये हैं, वे ही होने चाहिये।

लग्नों के शुभ अंशों की गणना

मेषे स्यादेकविंशोंशो मृगे गवि चतुर्दशः।
चतुर्विंशस्तुले युग्मे वृश्चिके दशमोऽशंका ॥४४ परि० २
सप्तमः कर्कटे मीने स्त्रियां पंचदशोंऽशकः।
सिंहेऽद्वानी(?)त्रयोविंशः स्यादिष्टांशो धनुष्यपि ॥४५ परि० २
कुम्भेस्यात्पंचविंशोंऽशः शुभवर्गाधिप्रेक्षितः।
ग्रहाः पश्यन्ति संत्यज्य द्विपडेकादशान्त्यमम् ॥४६ परि० २

— वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—मेष में २१ अंश, वृप में १४ अंश, मिथुन और तुला में २४ अंश, वृश्चिक में १० अंश, कर्क और मीन में ७ अंश, कन्या में १५ अंश, सिंह और मकर में १५ अंश, धन में २३ अंश और कुम्भ में २५ अंश शुभ होते हैं। परन्तु तृतीय, पष्ठ, एकादश और द्वादश स्थान को ग्रह नहीं देखते हों तभी लग्न शुभ जाननी चाहिये।

प्रतिष्ठा के लिये गोचर शुद्धि।

शुभाः सूर्येन्दुमंदारराहवस्त्रिषडायगाः।
दशमाः मंदचन्द्रार्काः शशी जन्मनि सप्तमे ॥४८परि०२
शुक्ले पक्षे द्वितीयश्च पंचमो नवमस्तथा।
दशाष्टद्विचतुर्थेषु बुधश्चैकादशे शुभः ॥४९ परि० २

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—सूर्य, चन्द्र, शनि, मंगल, राहु और केतु तीसरे, छटवे और ग्यारहवे स्थान में शुभ होते हैं। शनि, चन्द्र और सूर्य दशवे स्थान में भी शुभ होते हैं। चन्द्रमा लग्न और सप्तम में शुभ होता है। परन्तु शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा द्वितीय, पंचम, नवम, दशम और अष्टम स्थान मे श्रेष्ठ होता है। बुध ग्यारहवे स्थान में शुभ होता है।

शुभश्चैकादशे जीवो द्विसप्तनवपंचमे।
षट्सप्तदशजन्मानि त्यक्त्वा शुक्रः शुभप्रदः ॥५० परि०२

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—बृहस्पति लग्न से ग्यारहवे, दूसरे, सातवे, नौवे और पाँचवे स्थान में शुभ होता है। शुक्र छटवे, सातवे, दशवें और लग्न को छोड़कर शेष स्थानों में शुभ होता है।

लग्नशुद्धि का विशेष विचार

चन्द्रमा जन्मनक्षत्रे सर्वदाप्यशुभः स्थितः।
सर्वग्रहबलाभावे जीवसूर्येन्दुजं शुभम् ॥५३ परि० २

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—यदि जन्म नक्षत्र पर चन्द्रमा हो तो लग्न शुभ होती हुई भी अशुभ है। सम्पूर्ण ग्रहों के निर्बल होने पर भी यदि गुरु, सूर्य, चन्द्र और मंगल बलवान् हों तो लग्न शुभ है।

प्रश्नकाल की लग्न का विचार

शुभग्रहयुते लग्ने शुभग्रहनिरीक्षिते ।
त्रिषष्ठैकादशे पापाः प्रश्नकाले शुभप्रदाः ॥ ५६ परि० २
स्युः पंचनवकेन्द्रेषु जीवशुक्रबुधा यदि ।
यथाक्रमेण योगेऽस्मिन् सर्वं कार्यं शुभं वदेत् ॥६०परि०२

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—शुभ ग्रह से युक्त लग्न में अथवा शुभ ग्रह से दृष्ट लग्न में प्रश्न करना शुभ है। प्रश्नकाल की लग्न में पापग्रह तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थान में शुभ होते हैं। बृहस्पति, शुक्र और बुध क्रम से नवम, पंचम और केन्द्रस्थान (१।४।७।१०) में शुभ होते हैं। उपर्युक्त शुभ लग्न में सभी प्रकार के कार्य करना शुभ है।

विशेष—जिनको यक्ष, यक्षिणी की प्रतिष्ठा करनी हो उन्हें निम्न-लिखित मुहूर्त्त में करनी चाहिये ।

यक्षप्रतिष्ठामुहूर्त्त

बुधलग्ने जीवे वा चतुष्टयस्थे भृगौ हिबुकसंस्थे ।
वासनकुमारयक्षेन्दुभास्कराणां प्रतिष्ठा स्यात् ॥६२॥

—वास्तुसार

अर्थ—बुध लग्न में हो, गुरु चतुष्टय अर्थात् लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम में हो और शुक्र चतुर्थ स्थान में हो तो ऐसी शुभ लग्न में इन्द्र, कार्त्ति-केय, यक्ष, चन्द्र और सूर्य की प्रतिष्ठा करनी चाहिये। मंगल को छोड़कर

अभी तक जिस प्रतिष्ठा मुहूर्त्त का विचार किया गया है वह खास कर जिस दिन भगवान् को विराजमान करना हो उसी दिन के लिये ही है। क्योंकि यह मुहुर्त्त सब से प्रधान है। अब आगे इसी प्रतिष्ठा के अङ्गभूत मण्डपनिर्माण, ध्वजारोपण आदि का मुहूर्त्त दिया जाता है।

सभी वारों में प्रतिष्ठा की जा सकती है। यक्ष प्रतिष्ठा के लिये नक्षत्र पूर्व लिखित ही लेने चाहिये।

यक्षिणी प्रतिष्ठा का मुहूर्त्त

शुक्रोदये नवम्यां बलवति चन्द्रे कुजे गगनसंस्थे।
त्रिदशगुरौ बलयुक्ते देवीनां स्थापयेदर्चाम् ॥२१॥

—वास्तुसार

अर्थ—शुक्र के उदय में, नवमी के दिन, चन्द्रमा बलवान् हो, मंगल दशवे स्थान में हो और गुरु बलवान् हो ऐसी लग्न में यक्षिणी की प्रतिमा स्थापित करनी चाहिये। जिनबिम्ब बनवाने वाले धनिक को निम्नलिखित बातों का और विचार करना चाहिये।

योनिगणराशिभेदा:लभ्यं वर्गश्च नाडीवेधश्च।
नूतनबिम्बविधाने षड्विधमेतद् विलोक्यं ज्ञैः ॥२२॥

—वास्तुसार

अर्थ—योनि, गण, राशिभेद, लेनदेन, वर्ग और नाडिवेध ये छः प्रकार के बल विद्वानों को नवीन जिनबिम्ब निर्माण करते समय देखने चाहिये।

मण्डप बनाने का मुहूर्त्त

अथ भूमिं समां कृत्वा नक्षत्रे शोभने दिने।
प्रतिष्ठासद्विधानार्थं कारयेत्तत्र मण्डपम् ॥१ परि० ६

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—भूमि को साफ और पवित्र करके शुभ नक्षत्र और शुभ दिन में प्रतिष्ठा के लिये मण्डप तैयार करना चाहिये। सोम, बुध, शुक्र और गुरु इन वारों में, तथा (२।५।७।११।१२।१३) इन तिथियों में और मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा, श्रवण, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रों में मण्डप बनाना शुभ है।

ध्वजारोपण का मुहूर्त्त

ध्वजारोपणवारस्य रात्रौ शुभमुहूर्ततः।
ध्वजपीठमलंकृत्य पूर्ववत्पूजयेद्ध्वजम् ॥

—प्रतिष्ठाकल्पटिप्पणी

अर्थ—ध्वजारोपण वार में अर्थात् बुध, गुरु और शुक्र को रात्रि या दिन में शुभ नक्षत्र, शुभ तिथि और शुभ लग्न के होने पर ध्वजारोपण करना चाहिये।

होमाहुतिमुहूर्त्त

सूर्य जिस नक्षत्र में स्थित हो उससे तीन-तीन नक्षत्रों का एक त्रिक होता है, ऐसे सत्ताईस नक्षत्रों के नौ त्रिक हुए। उनमें पहिला

सूर्य का, दूसरा बुध का, तीसरा शुक्र का, चौथा शनैश्चर का, पाँचवाँ चन्द्रमा का, छटवाँ मङ्गल का, सातवाँ बृहस्पति का, आठवाँ राहु का और नवाँ केतु का त्रिक होता है। होम के दिन का नक्षत्र जिसके त्रिक में पड़े, उसी ग्रह के मुख में होमाहुति पड़ती है। दुष्ट ग्रह के मुख में होमाहुति शुभ नहीं होती है।

अग्निवास और उसका शुभाशुभफल

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर अभीष्ट तिथि तक गिनने से जितनी संख्या हो, उसमें एक और जोड़े। फिर रविबार से लेकर इष्ट वार तक गिनने से जितनी संख्या हो उसको भी उसी में जोड़े। जो राशि आवे उसमें चार का भाग दे। यदि तीन अथवा शून्य शेष रहे तो अग्नि का वास पृथ्वी में होता है, यह होम करनेवाले के लिये उत्तम कहा गया है। और यदि एक शेष रहे तो अग्नि का वास आकाश में होता है, इसका फल प्राणों का नाश करनेवाला कहा गया है। दो शेष में अग्नि का वास पाताल में होता है, इसका फल अर्थ नाशक बताया गया है।

जन्म कल्याण का मुहूर्त्त

शुद्ध होने पर स्थिर और द्विस्वभाव लग्न में, स्थिर लग्न के नवांश में, षड्वर्ग की शुद्धि देखकर जिनजन्म के समान मंजूषिका में से प्रतिमा जी को निकालना चाहिये।

दीक्षारम्भमुहूर्त्त

भरण्युत्तरफाल्गुन्यौ मघाचित्राविशाखिका-
पूर्वाभाद्रपदाभानि रेवती मुनिदीक्षणे ।

—प्रतिष्ठासार-संग्रह

अर्थ—भरणी, उत्तराफाल्गुनी, मघा, चित्रा, विशाखा, पूर्वा-भाद्रपद, रेवती इन नक्षत्रों में; गुरु, शुक्र, बुध इन वारों में और द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, त्रयोदशी, एकादशी इन तिथियों में दीक्षा लेना शुभ है। यहाँ पर प्रतिष्ठा मुहूर्त्त का प्रकरण समाप्त होता है, आगे गर्भाधानादि संस्कारों के मुहूर्त्त दिये जाते हैं।
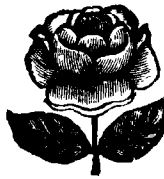
गर्भाधानादि संस्कारों के मुहूर्त

गर्भाधानमुहूर्त

नक्षत्र गण्डान्त, तिथि गण्डान्त, लग्न गण्डान्त, जन्म नक्षत्र से सातवाँ नक्षत्र, जन्म नक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, ग्रहण का दिन, व्यतीपात और वैधृतियोग, माता पिता के मरने का दिन, परिघ-योग का पूर्वार्द्ध, उत्पात से दूषित नक्षत्र, जन्मराशि, जन्मलग्न से आठवीं लग्न, पापग्रह युक्त नक्षत्र अथवा लग्न इन सब का त्याग करना चाहिये। भद्रा, छठ, चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा, सूर्यसंक्रान्ति, रिक्ता (४।९।१४), सन्ध्याकाल, मंगल, रवि, शनि इन तिथि और वारों को छोड़ कर शुभ तिथि और वारों में उत्तरात्रय, (उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा) मृगशिर, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष इन नक्षत्रों के होने पर गर्भाधान करना शुभ है।

गर्भाधान में लग्नबल

प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, दशम, नवम और पञ्चम स्थान में शुभ ग्रह स्थित हों; तृतीय षष्ठम, एकादश स्थान में पापग्रह हों; सूर्य, मंगल, और बृहस्पति लग्न को देखते हों; विषमराशि वा विषम नवांश में चन्द्रमा स्थित हो; ऐसी लग्न में गर्भाधान करना शुभ है। चित्रा,

पुनर्वसु, पुष्य और अश्विनी नक्षत्र में गर्भाधान करना मध्यम फलदायक है।*

सीमन्तोन्नयनमुहूर्त्त

बृहस्पति, रवि और मंगलवार में; मृगशिर, पुष्य, मूल, श्रवण, पुनर्वसु और हस्त नक्षत्र में; चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, अमावास्या, द्वादशी, षष्ठी, और अष्टमी को छोड़ कर अन्य तिथियों में; मासेश्वर के बली रहते, गर्भाधान से आठवें या छठवें मास में; केन्द्र, त्रिकोण में (१।४।७।१०।५।९) शुभ ग्रहों के रहते; ग्यारहवें, छटवें, तीसरे स्थान में क्रूरग्रहों के रहते हुए पुरुषसंज्ञक ग्रहों के लग्न अथवा नवांश में सीमन्तोन्नयन कर्म श्रेष्ठ है। किसी-किसी आचार्य के मत से उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, रोहिणी और रेवती नक्षत्र में

---

* गर्भाधानमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	उत्तभा० उत्तपा० उत्तफा० मृ० ह० अनु० रो० श्र० स्वा० श० ध० चि० पुन० पु० अश्वि०
वार	बु० गु० शु० सो०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १२ । १३
लग्न	जन्मलग्न और अष्टम लग्न को छोड़कर शेष लग्न शुभ हैं।

और चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र इन वारों में सीमन्तोन्नयन करना शुभ है।*

पुंसवनमुहूर्त्त

श्रवण, रोहिणी और पुष्य नक्षत्र में; शुभ ग्रहों के दिन में; गर्भाधान से तीसरे मास में; शुभ ग्रह से दृष्ट, युत वा शुभग्रहसम्बन्धी लग्न में और लग्न से आठवे स्थान में किसी ग्रह के न रहते, दोपहर के पूर्व पुंसवन करना चाहिये। इसमें सीमन्तोन्नयन के नक्षत्र भी लिये गये हैं।*

* सीमन्तोन्नयनमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	मृ० पु० मू० श्र० पुन० ह० उषा० उभा० उफा० रो० रे०
वार	गु० सू० मं०
तिथि	१।२।३।५।७।१०।११।१३

* पुंसवनमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श्र० रो० पु० उत्तम नक्षत्र हैं। मृ० पुन० ह० रे० मू० उषा० उभा० उफा० मध्यम नक्षत्र हैं
वार	मं० शु० सू० बृ०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३
लग्न	पुंसंज्ञक लग्न में, लग्न से १।४।५।७।९।१० इन स्थानों में शुभ ग्रह हों तथा चंद्रमा १।६।८।१२ इन स्थानों में न हो और पापग्रह ३।६।११ में हों।

जातकर्म और नामकर्म का मुहूर्त्त

यदि किसी कारण वश जन्मकाल में जातकर्म नहीं किया गया हो तो अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पौर्णमासी, सूर्यसंक्रान्ति तथा चतुर्थी और नवमी छोड़कर अन्य तिथियों में; व्यतीपातादि दोष रहित शुभ ग्रहों के दिनों में; जन्मकाल से ग्यारहवे या बारहवे दिन में; मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्र में जातकर्म और नामकर्म करने चाहिये। जैन मन्यता के अनुसार नामकर्म ४५ दिन तक किया जा सकता है।*

---

* जातकर्म और नामकर्ममुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श० मृ० रे० चि० अनु० उषा०, उभा० उफा० रो० ह० अश्वि० पु० अभि० स्वा० पुन० श्र० ध०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	१।२।३।५।७।१०।११।१३
शुभलग्न	२।५।८।११
लग्नशुद्धि	लग्न से १।५।७।९।१० इन स्थानों में शुभ ग्रह उत्तम हैं। ३।६।११ इन स्थानों में पापग्रह शुभ हैं। ८।१२ में कोई भी ग्रह नहीं होना चाहिये।

स्तनपानमुहूर्त

अश्विनी, रोहिणी, पुष्य, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, उत्तराभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रों में शुभ वार और शुभ लग्न में स्तनपान कराना शुभ है।

स्तनपानमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	अ० रो० पु० पुन० उफा० ह० चि० अनु० उषा० मू० ध० श० उभा० रे०
वार	शु० बु० सो० गु०

सूतिकास्नानमुहूर्त्त

रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, हस्त, स्वाती, अश्विनी और अनुराधा नक्षत्र में; रवि, मंगल और गुरु वार में प्रसूता स्त्री का स्नान करना शुभ है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा नक्षत्र में; बुध और शनिवार में; अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी तिथि में प्रसूता स्त्री को स्नान नहीं करना चाहिये।

सूतिकास्नानमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रे० उभा० उषा० उफा० रो० मृ० ह० स्वा० अश्वि० अनु०
वार	सू० मं० गु०
तिथि	१ । २ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १३
लग्नशुद्धि	पञ्चम में कोई ग्रह नहीं हो, १।४।७।१० में शुभ ग्रह हों

दोलारोहणमुहूर्त्त

रेवती, मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, तीनों उत्तरा और रोहिणी नक्षत्र में तथा चन्द्र, बुध, बृहस्पति और शुक्र वार में पहिले पहिल बालक को पालने पर चढ़ाना शुभ है।

दोलारोहणमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रे० मृ० चि० अनु० ह० अश्वि० पु० अभि० उभा० उषा० उफा० रो०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	१ । २ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १२ । १३

भूम्युपवेशनमुहूर्त्त

मङ्गल के बली होने पर; नवमी, चौथ, चतुर्दशी को छोड़कर अन्य तिथियों में; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में बालक को भूमि में बैठाना चाहिये।

भूम्युपवेशनमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	उषा० उभा० उफा० रो० मृ० ज्ये० अनु० अश्वि० ह० पु० अभि०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	१ । २ । ३ । ५ । ७ । ११ । १२ । १३

बालक को बाहर निकालने का मुहूर्त्त

अश्विनी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती नक्षत्र में; षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, प्रतिपदा, पूर्णिमा, अमावस्या और रिक्ता को छोड़कर शेष तिथियों में बालक को घर से बाहर निकालना शुभ है।

शिशु निष्क्रमणमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	अश्वि० मृ० पुन० पु० ह० अनु० श्र० ध० रे० और मतान्तर से उषा० उभा० उफा० श० मू० रो०।
तिथि	२ । ५ । ७ । १० । ११ । १३

अन्नप्राशनमुहूर्त्त

चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी, अष्टमी, अमावस्या और द्वादशी तिथि को छोड़ अन्य तिथियों में; जन्मराशि अथवा जन्मलग्न मे आठवी राशि, आठवाँ नवांश, मीन, मेष और वृश्चिक को छोड़कर अन्य लग्न में; तीनो उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्र में; छठवे मास से लेकर सम मास में अर्थात् छठवे, आठवे, दशवे इत्यादि मासों में बालकों का और पाँचवे मास से लेकर विषम मासों में अर्थात् पाँचवे, सातवे, नवे इत्यादि मासों में कन्याओं का अन्नप्राशन शुभ होता है। परन्तु अन्नप्राशन शुक्लपक्ष में दोपहर के पूर्व करना चाहिये।

अन्नप्राशन के लिये लग्नशुद्धि

लग्न से पहिले, चौथे, सातवें और तीसरे स्थान में शुभ ग्रह हों; दशवे स्थान में कोई ग्रह न हो; तृतीय, षष्ठम और एकादश स्थान में पापग्रह हों और लग्न, आठवे और छटवें स्थान को छोड़ अन्य स्थानों में चन्द्रमा स्थित हो ऐसी लग्न में अन्नप्राशन शुभ होता है।

अन्नप्राशनमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	रो० उभा० उषा० उफा० रे० चि० अनु० ह० पु० अश्वि० अभि० पुन० स्वा० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । १३ । १५
लग्न	२ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ९ । १० । ११
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।४।७।९।५।३ में; पापग्रह ३।६।११ इन स्थानों में; चन्द्रमा ४।६।८।१२ इन में न हो ।

शिशुताम्बूलभक्षणमुहूर्त्त

मंगल और शनैश्चर को छोड़ कर अन्य दिनों में; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, मूल, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, स्वाती और धनिष्ठा नक्षत्र में; मिथुन, मकर, कन्या, कुम्भ, वृष और मीन लग्न में; चौथे, सातवे, दशवे, पाँचवे, नवे और लग्नस्थान में शुभ ग्रहों के रहते; छटवे, ग्यारहवे और तीसरे स्थान में पापग्रहों के रहते बालक का ताम्बूलभक्षण शुभ होता है ।

ताम्बूलभक्षणमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	उषा० उभा० उफा० रो० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु० श्र० मू० पुन०, ज्ये० स्वा० ध०
वार	बु० गु० शु० सो० सू०
लग्न	३ । १० । ६ । ११ । २ । १२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १ । ४ । ७ । १० । ५ । ९ में; पापग्रह ३।६।११ में शुभ होते हैं ।

कर्णवेधमुहूर्त्त

चैत्र, पौष, आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्त्तिक शुक्ल एकादशी तक, जन्ममास, रिक्तातिथि (४।९।१४), सम वर्ष और जन्मतारा को छोड़कर जन्म से छटवे, सातवे, आठवे महीने में अथवा बारहवे या सोलहवे दिन, बुध, गुरु, शुक्र, सोमवार में और श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में बालक का कर्णवेध शुभ होता है ।

कर्णवेधमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	श्र० ध० पुन० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु० अभि०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	१ । २ । ३ । ५ । ६ । ७ । १० । ११ । १२ । १३ । १५
लग्न	२ । ३ । ४ । ६ । ७ । ९ । १२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।३।४।५।७।९।१०।११ इन स्थानों में; पापग्रह ३।६।११ इन स्थानों में शुभ होते हैं। अष्टम में कोई ग्रह न हो। यदि गुरु लग्न में हो तो विशेष उत्तम होता है।

चूड़ाकर्म (मुण्डन) का मुहूर्त्त

जन्म से तीसरे, पाँचवे, सातवे इत्यादि विषम वर्षों में; अष्टमी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, अमावस्या, पूर्णमासी और सूर्यसंक्रांति को छोड़ अन्य तिथियों में; चैत्र महीने को छोड़ उत्तरायण में; बुध, चन्द्र, शुक्र और बृहस्पति वार में; शुभ ग्रहों के लग्न अथवा नवांश में; जिसका मुण्डन कराना हो उसके जन्मलग्न अथवा जन्मराशि से आठवीं राशि को छोड़कर अन्य लग्न व राशि में; लग्न से आठवे स्थान में शुक्र को छोड़ अन्य ग्रहों के न रहते; ज्येष्ठा,

मृगशिर, रेवती, चित्रा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्र में; लग्न से तृतीय, एकादश और षष्ठम स्थान में पापग्रहों के रहते मुण्डन कराना शुभ है।

मुण्डनमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	ज्ये० मृ० रे० चि० ह० अश्वि० पु० अभि० स्वा० पुन० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १३
लग्न	२ । ३ । ४ । ६ । ७ । ९ । १२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।२।४।५।७।९।१० स्थानों में शुभ होते हैं; पापग्रह ३।६।११ में शुभ हैं। अष्टम में कोई ग्रह नहीं हो।

अक्षरारम्भमुहूर्त्त

जन्म से पाँचवे वर्ष में; एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पञ्चमी और तृतीया तिथि में; उत्तरायण में; हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्र में; मेष, मकर, तुला और कर्क को छोड़ अन्य लग्न में बालक को अक्षरारम्भ कराना शुभ है।

अक्षरारम्भमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० श्र० स्वा० रे० पुन० चि० अनु०
वार	सो० बु० शु० श०
तिथि	२ । ३ । ५ । ६ । १० । ११ । १२
लग्न	२।३।६।१२ इन लग्नों में परन्तु अष्टम में कोई ग्रह न हो

विद्यारम्भ का मुहूर्त्त

मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा (पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी), पुष्य, आश्लेषा इन नक्षत्रों में; रवि, गुरु, शुक्र इन वारों में; षष्ठी, पञ्चमी, तृतीया, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया, इन तिथियों में और लग्न से नवमे, पाँचवे, पहिले, चौथे, सातवे, दशवे स्थान में शुभ ग्रहों के रहने पर विद्यारम्भ करना शुभ है। किसी किसी आचार्य के मत से तीनों उत्तरा, रेवती और अनुराधा में भी विद्यारम्भ शुभ कहा गया है।

विद्यारम्भमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	मृ० आ० पुन० ह० चि० स्वा० श्र० ध० श० अश्वि० पूभा० पूषा० पूफा० पु० आश्ले०
वार	सू० गु० शु०
तिथि	५ । ६ । ३ । ११ । १२ । १० । २

यज्ञोपवीतमुहूर्त्त

हस्त, अश्विनी, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, आश्लेषा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मूल, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों पूर्वा और आर्द्रा नक्षत्र में; रवि, बुध, शुक्र और सोमवार में; द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, एकादशी, द्वादशी और दशमी में यज्ञोपवीत धारण करना शुभ है।

यज्ञोपवीतमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० उफा० उषा० उभा० रो० आश्ले० स्वा० पुन० श्र० ध० श० मू० मृ० रे० चि० अनु० पूफा० पूषा० पूभा० आ०
वार	सू० बु० शु० सो० गु०
तिथि	२।३।५।१०।११।१२ शुक्ल पक्ष में। १।२।३।५ कृष्ण पक्ष में।
लग्न शुद्धि	लग्नेश ६।८ स्थानों में न हो. शुभग्रह १।४।७।५।९।१० स्थानों में शुभ होते हैं, पापग्रह ३।६।११ में शुभ होते हैं, परन्तु १।४।८ में पापग्रह शुभ नहीं होते हैं।

वाग्दानमुहूर्त्त

उत्तराषाढ़ा, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिका, रोहिणी, रेवती, मूल, मृगशिर, मघा, हस्त, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में वाग्दान करना शुभ है।

विवाहमुहूर्त्त

मूल, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, स्वाती, मघा, रोहिणी इन नक्षत्रों में और ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख, मार्गशीर्ष, आषाढ़ इन महीनों में विवाह करना शुभ है।

विवाह में कन्या के लिये गुरुबल, वर के लिये सूर्यबल और दोनों के लिये चन्द्रबल का विचार करना चाहिये।

गुरुबलविचार

बृहस्पति कन्या की राशि से नवम, पञ्चम, एकादश, द्वितीय और सप्तम राशि में शुभ; दशम, तृतीय, षष्ठम और प्रथम राशि में दान देने से शुभ और चतुर्थ, अष्ठम, द्वादश राशि में अशुभ होता है।

सूर्यबलविचार

सूर्य वर की राशि से तृतीय, षष्ठम, दशम, एकादश राशि में शुभ; प्रथम, द्वितीय, पञ्चम, सप्तम, नवम राशि में दान देने से शुभ और चतुर्थ, अष्टम, द्वादश राशि में अशुभ होता है।

चन्द्रबलविचार

चन्द्रमा वर और कन्या की राशि से तीसरा, छटवाँ, सातवाँ, दशवाँ, ग्यारहवाँ शुभ; पहिला, दूसरा, पाँचवाँ, नौवाँ दान देने से शुभ और चौथा, आठवाँ, बारहवाँ अशुभ होता है।

विवाह में अन्धादिलग्न

दिन में तुला और वृश्चिक, रात्रि में तुला और मकर बधिर हैं। तथा दिन में सिंह, मेष, वृष और रात्रि में कन्या, मिथुन, कर्क अंधसंज्ञक हैं। दिन में कुम्भ और रात्रि में मीन ये दो लग्न पङ्गु होते हैं। किसी-किसी आचार्य के मत से धन, तुला, वृश्चिक ये अपराह्न में बधिर हैं; मिथुन, कर्क, कन्या ये लग्न रात्रि में अन्धे हैं; सिंह, मेष, वृष ये लग्न दिन में अन्धे हैं और मकर, कुम्भ, मीन ये लग्न प्रातःकाल तथा सायंकाल में कुबड़े होते हैं।

अन्धादि लग्नों का फल

यदि विवाह बधिर लग्न में हो तो वर-कन्या दरिद्र, दिवान्ध लग्न में हो तो कन्या विधवा, रात्र्यन्ध लग्न में हो तो सन्तति मरण और पङ्गु में हो तो धन नाश होता है।

लग्नशुद्धि

लग्न से बारहवें शनि, दशवे मंगल, तीसरे शुक्र, लग्न में चन्द्रमा और क्रूर ग्रह अच्छे नहीं होते। लग्नेश, शुक्र, चन्द्रमा छटवे और आठवे में शुभ नहीं होते। लग्नेश और सौम्य ग्रह आठवे में अच्छे नहीं होते हैं और सातवे में कोई भी ग्रह शुभ नहीं होता है।

ग्रहों का बल

प्रथम, चौथे, पाँचवे, नवे और दशवे स्थान में स्थित बृहस्पति सब दोषों को नष्ट करता है। सूर्य ग्यारहवे स्थान में स्थित तथा

चन्द्रमा वर्गोत्तम लग्न में स्थित नवांश दोष को नष्ट करता है। बुध लग्न, चौथे, पाँचवे, नवे और दशवे स्थान में हो तो सौ दोषों को दूर करता है। यदि शुक्र इन्हीं स्थानों में हो तो दो सौ दोषों को दूर करता है। यदि इन्हीं स्थानों में बृहस्पति स्थित हो तो एक लाख दोषों को नाश करता है। लग्न का स्वामी अथवा नवांश का स्वामी यदि लग्न, चौथे, दशवे, ग्यारहवे स्थान में स्थित हो तो अनेक दोषों को शीघ्र ही भस्म कर देता है।

वर्णसंकरों के विवाह का मुहूर्त्त

भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, ज्येष्ठा, तीनों पूर्वा, विशाखा, श्रवण, शतभिष, इन नक्षत्रों में; शनि, मंगल, रवि, इन वारों में और कृष्ण पक्ष में वर्णसंकरों का विवाह शुभ होता है।

बधूप्रवेशमुहूर्त्त

विवाह के दिन से १६ दिन के भीतर नव, सात, पाँच दिन में बधूप्रवेश शुभ है। यदि किसी कारण से १६ दिन के भीतर बधूप्रवेश न हो तो विषम मास, विषम दिन और विषम वर्ष में बधूप्रवेश करना चाहिये।

तीनों उत्तरा (उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा), रोहिणी, अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मृगशिर, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा, और स्वाती नक्षत्र में; रिक्ता (४।९।१४) छोड़

शुभ तिथियों में और रवि, मंगल, बुध छोड़ शेष वारों में बधूप्रवेश करना शुभ है।

बधूप्रवेशमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	उषा० उफा० उभा० रो० अश्वि० ह० पु० मृ० रे० चि० अनु० श्र० ध० मू० म० स्वा०
वार	सो० गु० शु० श०
तिथि	१।२।३।५।७।८।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।३।५।६।८।९।११।१२

द्विरागमनमुहूर्त्त

विषम (१।३।५।७) वर्षों में; कुम्भ, वृश्चिक, मेष राशियों के सूर्य में; गुरु, शुक्र, चन्द्र इन वारों में; मिथुन, मीन, कन्या, तुला, वृष, इन लग्नों में और अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, मूल, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रों में द्विरागमन शुभ है।

द्विरागमनमुहूर्त्तचक्र

समय	१।३।५।७।९ इन वर्षों में कुं० वृ० मे० के सूर्य में।
नक्षत्र	अश्वि० पु० ह० उषा० उभा० उफा० रो० श्र० ध० श० पुन० स्वा० मू० मृ० रे० चि० अनु०
वार	बु० बृ० शु० सो०
तिथि	१ । २ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १२ । १३ । १५
लग्न	२ । ३ । ६ । ७ । १२
लग्नशुद्धि	लग्न से १।२।३।५।७।१०।११ स्थानों में शुभ ग्रह और ३।६।११ में पापग्रह शुभ होते हैं।

यहाँ संस्कारमुहूर्त्त प्रकरण समाप्त होता है। अब आगे अन्य आवश्यक यात्रा, गृहनिर्माण, गृहप्रवेश, व्यापारादि के मुहूर्त्त दिये जाते हैं।

—:o:—

फुटकर मुहूर्त्त प्रकरण

यात्रामुहूर्त्त

रेवत्यां श्रवणे हस्ते पुष्येऽश्विन्यां पुनर्वसौ ।
ज्येष्ठायां चानुराधायां धनिष्ठायां मृगे व्रजेत् ॥६९ परि० ३

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—रेवती, श्रवण, हस्त, पुष्य, अश्विनी, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अनुराधा, धनिष्ठा और मृगशिर नक्षत्र में यात्रा करना शुभ है।

सब दिशाओं में यात्रा के लिये नक्षत्र

हस्तपुष्याश्विमित्रेषु दिक्षु सर्वास्वपि व्रजेत् ।
प्रत्यंगारं बुधं शुक्रं दक्षिणं च विवर्जयेत् ॥७१ परि० ३

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—हस्त, पुष्य, अश्विनी, अनुराधा ये नक्षत्र चारों दिशाओं की यात्रा में शुभ होते हैं। परन्तु मंगल, बुध और शुक्रवार को दक्षिण नहीं जाना चाहिये।

यात्रा के लिये लग्नशुद्धि

राहुमन्दकुजाः शस्तास्त्रिषष्ठैकादशस्थिताः ।
बुधः षड् द्विदशं त्यक्त्वा षट् सप्तान्त्यं भृगुस्तथा ॥७३ परि० ३

शशी षष्ठाष्टजन्मान्त्यं·········गुरुस्तथा ।
चतुर्थं दशमं त्यक्त्वा क्षीणश्चन्द्रः शुभः पुनः ॥७४ परि० ३

त्रिदशैकादशे षष्ठे स्थितः सूर्यः शुभप्रदः ।
यात्रालग्नं प्रसाध्यैवं प्रागवद्(?)गोचरे शुभे ॥७५परि० ३

—वसुनन्दि-प्रतिष्ठापाठ

अर्थ—राहु, शनैश्चर, मंगल ये तीनों तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थान में शुभ होते हैं। बुध छटवे, दूसरे और दशवे स्थान को छोड़ शेष स्थानों में शुभ होता है। शुक्र छटवे, सातवे और बारहवे को छोड़ कर शेष स्थानों में शुभ होता है। चन्द्रमा छटवे, आठवे, लग्न और बारहवे को छोड़ शेष स्थानों में शुभ है। क्षीण चन्द्रमा चौथे और दशवे को छोड़ शेष स्थानों में शुभ है। सूर्य तीसरे, छटवें ग्यारहवे स्थान में शुभ होता है। इस प्रकार से यात्रा लग्न की शुद्धि देख लेनी चाहिये तथा प्रतिष्ठा के समान गोचर शुद्धि भी देख लेनी चाहिये।

वारशूल और नक्षत्रशूल

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार तथा शनिवार को पूर्व; पूर्वाभाद्रपद, नक्षत्र और गुरुवार को दक्षिण; शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्र को पश्चिम और मंगल तथा बुधवार को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्तर दिशा को नहीं जाना चाहिये। यात्रा में चन्द्रमा का विचार अवश्य करना चाहिये। दिशाओं में चन्द्रमा का वास निम्न प्रकार से जानना चाहिये।

चन्द्रवासविचार

मेष, सिंह और धन राशि का चन्द्रमा पूर्व दिशा में; वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा में; तुला, मिथुन और

कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में; कर्क, वृश्चिक और मीन का चन्द्रमा उत्तर दिशा में वास करता है।

चन्द्रफल

सम्मुख चन्द्रमा धनलाभ करनेवाला, दक्षिण चन्द्रमा सुखसम्पत्ति देनेवाला, पृष्ठ चन्द्रमा शोकताप देने वाला और वाम चन्द्रमा धन-नाश करनेवाला होता है।

यात्रामुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	अश्वि० पुन० अनु० मृ० पु० रे० ह० श्र० ध० ये उत्तम हैं। रो० उषा० उभा० उफा० पूषा० पूभा० ज्ये० मू० श० ये मध्यम हैं। भ० कृ० आ० आश्ले० म० चि० स्वा० वि० ये निन्द्य हैं।
तिथि	२। ३। ५। ७। १०। ११। १३

चन्द्रवास चक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृष	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धन	कुम्भ	मकर	मीन

समयशूल चक्र

पूर्व	प्रातःकाल
पश्चिम	सायङ्काल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अर्द्धरात्रि

दिक्शूलचक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
चं० श०	बृ०	सू० शु०	मं० बु०

योगिनीचक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०	दिशा
९।१	३।११	१३।५	१२।४	१४।६	१५।७	१०।२	३०।८	तिथि

गृहनिर्माणमुहूर्त्त

मृगशिर, पुष्य, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिष, चित्रा, हस्त, स्वाती, रोहिणी, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रों में; चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारों में और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियों में गृहारम्भ श्रेष्ठ होता है।

गृहारम्भमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	मृ० पु० अनु० उफा० उभा० उषा० ध० श० चि० ह० स्वा० रो० रे०
वार	चं० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १३ । १५
मास	वै० श्रा० मा० पौ० फा०
लग्न	२ । ३ । ५ । ६ । ८ । ९ । ११ । १२
लग्न-शुद्धि	शुभ ग्रह लग्न से १।४।७।१०।५।९ इन स्थानों में एवं पापग्रह ३।६।११ इन स्थानों में शुभ होते हैं। ८।१२ स्थान में कोई भी ग्रह नहीं होना चाहिये।

नूतनगृहप्रवेशमुहूर्त्त

उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, रेवती इन नक्षत्रों में; चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारों में, और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी इन तिथियों में गृहप्रवेश करना शुभ है।

नूतनगृहप्रवेशमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	उभा० उषा० उफा० रो० मृ० चि० अनु० रे०
वार	चं० बु० गु० शु० श०
तिथि	२।३।५।६।७।१०।११।१२।१३
लग्न	२।५।८।११ उत्तम हैं। ३।६।९।१२ मध्यम है।
लग्न-शुद्धि	लग्न से १।२।३।५।७।९।१०।११ इन स्थानों में शुभ ग्रह शुभ होते हैं। ३।६।११ इन स्थानों में पापग्रह शुभ होते हैं। ४।८। इन स्थानों में कोई ग्रह नहीं होना चाहिये।

जीर्णगृहप्रवेशमुहूर्त्त

शतभिष, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी इन नक्षत्रों में; चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारों में और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी इन तिथियों में जीर्णगृहप्रवेश करना शुभ है।

जीर्णगृहप्रवेशमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	श० पु० स्वा० ध० चि० अनु० मृ० रे० उभा० उफा० उषा० रो०
वार	चं० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १२ । १३
मास	का० मार्ग० श्रा० मा० फा० वै० ज्ये०

शान्तिक और पौष्टिक कार्य्य का मुहूर्त्त

अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पुनर्वसु, स्वाती, अनुराधा मघा इन नक्षत्रों में; रिक्ता (४।९।१४), अष्टमी, पूर्णमासी, अमावास्या इन तिथियों को छोड़ अन्य तिथियों में और रवि, मंगल, शनि इन वारों को छोड़ शेष वारों में शान्तिक और पौष्टिक कार्य करना शुभ है।

शान्ति और पौष्टिक कार्य के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	अ० पु० ह० उषा० उफा० उभा० रो० रे० श्र० ध० श० पुन० स्वा० अनु० म०
वार	चं० बु० गु० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १२ । १३

कूँआ खुदवाने का मुहूर्त्त

हस्त, अनुराधा, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, धनिष्ठा, शतभिष, मघा, रोहिणी पुष्य, मृगशिर, पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रों में; बुध, गुरु, शुक्र इन वारों में और रिक्ता (४।९।१४) छोड़ सभी तिथियों में शुभ होता है।

कूआँ बनवाने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	ह० अनु० रे० उफा० उषा० उभा० ध० श० म० रो० पु० मृ० पूषा०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५

दुकान करने का मुहूर्त्त

रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, पुष्य, चित्रा, रेवती, अनुराधा, मृगशिर, अश्विनी इन नक्षत्रों में तथा शुक्र, बुध, गुरु, सोम इन वारों में और रिक्ता, अमावस्या छोड़ शेष तिथियों में दुकान करना शुभ है।

दुकान करने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	रो० उषा० उभा० उफा० ह० पु० चि० रे० अनु० मृ० अश्वि०
वार	शु० बु० गु० सो०
तिथि	२।३।५।७।१०।१२।१३

बड़े-बड़े व्यापार करने का मुहूर्त्त

हस्त, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, चित्रा इन नक्षत्रों में; शुक्र, बुध, गुरु इन वारों में और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियों में बड़े २ व्यापार सम्बन्धी कारोबार करना शुभ है।

बड़े-बड़े व्यापारिक कार्य प्रारम्भ करने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	ह० पु० उफा० उभा० उषा० चि०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । ११ । १३

वस्त्र तथा आभूषण धारण करने का मुहूर्त्त

रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य और पुनर्वसु नक्षत्र में; सोम, मंगल, शनि इन दिनों को छोड़ शेष दिनों में और रिक्ता को छोड़ शेष तिथियों में नवीन वस्त्र तथा आभूषण धारण करना शुभ है।

वस्त्र और भूषण धारण करने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	रे० उफा० उषा० उभा० रो० अश्वि० ह० चि० स्वा० वि० अनु० ध० पु० पुन०
वार	बु० गु० शु० र०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । ८ । १० । ११ । १२ । १३ । १५

जेवर बनाने का मुहूर्त्त

रेवती, अश्विनी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मृगशिर, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, हस्त, चित्रा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा-फाल्गुनी, स्वाती, रोहिणी और त्रिपुष्कर योग का नक्षत्र तथा शुभ वारों में जेवर बनवाना शुभ है

जेवर बनवाने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	रे० अश्वि० श्र० ध० श० मृ० पु० पुन० अनु० ह० चि० उफा० उषा० उभा० स्वा० रो०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । ८ । १० । ११ । १२ । १३ । १५

नमक बनाने का मुहूर्त्त

भरणी, रोहिणी, श्रवण इन नक्षत्रों में शनिवार को नमक बनाना शुभ है ।

नमक बनाने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	म० रो० श्र० मतान्तर से अश्वि० पु० ह०
वार	श० मतान्तर से र० मं० बु०
तिथि	१ । २ । ३ । ४ । ५ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ । १३

राजा से मिलने का मुहूर्त्त

श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, मृगशिर, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, अश्विनी, चित्रा, स्वाती इन नक्षत्रों में और रवि, सोम, बुध गुरु, शुक्र इन वारों में राजा से मिलना शुभ है।

राजा से मिलने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	श्र० ध० उषा० उभा० उफा० मृ० पु० अनु० रो० रे० अश्वि० चि० स्वा०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२ ३ । ५ । ७ । ११ । १३

बगीचा लगाने का मुहूर्त्त

शतभिष, विशाखा, मूल, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य इन नक्षत्रों में तथा शुक्र, सोम, बुध, गुरु इन वारों में बगीचा लगाना शुभ है।

बगीचा लगाने के मुहूर्त का चक्र

मास	वै० श्रा० मार्ग० का० फा०
नक्षत्र	श० वि० मू० रे० चि० अनु० मृ० उषा० उभा० उफा० रो० ह० अश्वि० पु०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १२ । १३ । १५

हथियार बनाने का मुहूर्त्त

कृत्तिका, विशाखा इन नक्षत्रों में तथा मंगल, रवि, शनि इन वारों में और शुभ ग्रहों के लग्नों में शस्त्र निर्माण करना शुभ होता है।

हथियार बनाने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	कृ० वि०
वार	मं० र० श०

हथियार धारण करने का मुहूर्त्त

पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, रोहिणी, मृगशिर, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रेवती, अश्विनी इन नक्षत्रों में; रवि, शुक्र, गुरु इन वारों में और रिक्ता (४९।१४) छोड़ शेष तिथियों में हथियार धारण करना शुभ है।

हथियार धारण करने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	पुन० पु० ह० चि० रो० मृ० वि० अनु० ज्ये० उफा० उषा० उभा० रे० अश्वि०
वार	र० शु० गु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ६ । ७ । ८ । १० । ११ । १२ । १३ । १५

रोगमुक्त होने पर स्नान करने का मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, आश्लेषा, पुनर्वसु, स्वाती, मघा, रेवती इन नक्षत्रों को छोड़ शेष नक्षत्रों में; रवि, मंगल, गुरु इन वारों में और रिक्तादि तिथियों में रोगी को स्नान कराना शुभ है।

रोगी को स्नान कराने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	अ० भ० कृ० मृ० आ० पु० पुन० पूफा० पूभा० पूषा० श्र० ध० श० ह० चि० वि० अनु० ज्ये० मू०
वार	र० मं० गु०
तिथि	४ । ९ । १४ । ३ । ५ । ७ । १० । ११
लग्न	१ । ४ । ७ । १०
लग्नशुद्धि	चन्द्रमा निर्बल हो । १ । ४ । ७ । १० । ९ । ५ । २ इन स्थानों में पापग्रह हों ।

कारीगरी सीखने का मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रों में शुभ वार और शुभ तिथि में कारीगरी सीखना शुभ होता है।

कारीगरी सीखने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	उफा० उभा० उषा० रो० स्वा० पुन० श्र० ध० श० ह० अश्वि० पु० अभि० मृ० रे० चि० अनु०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । ८ । १० । १२ । १३ । १५

पुल बनाने का मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, स्वाती, मृगशिर इन नक्षत्रों में; गुरु, शनि, रवि इन वारों में और स्थिर लग्नों में पुल बनाना शुभ है।

पुल बनाने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	उफा० उषा० उभा० रो० स्वा० मृ०
वार	गु० श० र०
तिथि	शुक्ल पक्ष में २ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १३
लग्न	२ । ५ । ८ । ११

खटिया बनवाने का मुहूर्त्त

रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, अश्विनी इन नक्षत्रों में शुभ वार और शुभ योग के होने पर खटिया बनाना शुभ होता है।

खट्वानिर्माणमुहूर्त्तचक्र

नक्षत्र	रो० उषा० उभा० उफा० ह० पु० पुन० अनु० अश्वि०
वार	सो० बु० गु० शु० मतान्तर से र०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १३

कर्ज लेने का मुहूर्त्त

स्वाती, पुनर्वसु, विशाखा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, अश्विनी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रों में ऋण लेना शुभ है। हस्त नक्षत्र, वृद्धियोग, रवि वार इनका त्याग अवश्य करना चाहिये।

ऋण लेने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	स्वा० पुन० वि० पु० श्र० ध० श० अश्वि० मृ० रे० चि० अनु०
वार	सो० गु० शु० बु०
तिथि	१ । २ । ३ । ४ । ५ । ७ । ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १५
लग्न	१ । ४ । ७ । १०
लग्नशुद्धि	५ । ८ । ९ इन स्थानों में ग्रह अवश्य हों।

वर्षारम्भ में हल चलाने का मुहूर्त्त

मूल, विशाखा, मघा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् इन नक्षत्रों में हल चलाना शुभ है।

हलचलाने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	मू० वि० म० स्वा० पुन० श्र० ध० श० उफा० उभा० उषा० रो० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु० अभि०
वार	सो० मं० बु० गु० शु०
तिथि	२। ३। ५। ७। १०। ११। १२। १३। १५
लग्न	२। ३। ६। ८। ९। १२

बीज बोने का मुहूर्त्त

मूल, मघा, स्वाती, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य इन नक्षत्रों में बीज बोना शुभ है।

बीज बोने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	मू० म० स्वा० ध० उफा० उभा० उषा० रो० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु०
वार	सो० बु० गु० शु०
तिथि	२। ३। ५। ७। १०। ११। १२। १३। १५

फसल काटने का मुहूर्त्त

पूर्वाभाद्रपद, हस्त, कृत्तिका, धनिष्ठा, श्रवण, मृगशिर, स्वाती, मघा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, पूर्वाषाढ़ा, भरणी, चित्रा, पुष्य, मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा इन नक्षत्रों में; सोम, बुध, गुरु, शुक्र, रवि इन वारों में; स्थिर लग्नों में और शुभ तिथियों में फसल काटना शुभ होता है।

फसल काटने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	पूफा० ह० कृ० ध० श्र० मृ० स्वा० म० उफा० उभा० उषा० पूषा० भ० चि० पु० मू० ज्ये० आ० अश्ले०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । ६ । ८ । १० । ११ । १२ । १३ । १५
लग्न	२ । ५ । ८ । ११

कणमर्दन अर्थात् दमरी चलाने का मुहूर्त्त

अनुराधा, श्रवण, मूल, रेवती, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, ज्येष्ठा, रोहिणी इन नक्षत्रों में कणमर्दन शुभ होता है।

नौकरी करने का मुहूर्त्त

हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिर, पुष्य इन नक्षत्रों में; बुध, गुरु, शुक्र, रवि इन वारों में और शुभ तिथियों में नौकरी करना शुभ है।

नौकरी करने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	ह० चि० अनु० रे० अश्वि० मृ० पु०
वार	बु० गु० शु० र०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १३

मुकद्दमा दायर करने का मुहूर्त्त

ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, मूल, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रों में; तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी, पंचमी, दशमी, पूर्णमासी इन तिथियों में और रवि, बुध, गुरु, शुक्र इन वारों में मुकद्दमा दायर करना शुभ है।

मुकद्दमा दायर करने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	ज्ये० आ० भ० पूषा० पूभा० पूफा० मू० आश्ले० म०
वार	र० बु० गु० शु०
तिथि	३ । ५ । ८ । १० । १३ । १५
लग्न	३ । ६ । ७ । ८ । ११
लग्नशुद्धि	सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र ये ग्रह १।४।७।१० इन स्थानों में और पापग्रह ३।६।११ इन स्थानों में शुभ होते हैं; परन्तु अष्टम में कोई ग्रह नहीं होना चाहिये।

जूता पहिनने का मुहूर्त्त

चित्रा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, अनुराधा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, मृगशिर, विशाखा, कृत्तिका, मूल, रेवती इन नक्षत्रों में और बुध, शनि, रवि इन वारों में जूता पहिनना शुभ होता है।

जूता पहिनने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	चि० पूफा० पूषा० पूभा० अनु० ज्ये० आश्ले० म० मृ० वि० कृ० मू० रे०
वार	बु० श० र०

औषध बनाने का मुहूर्त्त

हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, मूल, पुनर्वसु, स्वाती, मृगशिर, चित्रा, रेवती, अनुराधा इन नक्षत्रों में और रवि, सोम, बुध, गुरु शुक्र इन वारों में औषध निर्माण करना शुभ है।

औषध बनाने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० श्र० ध० श० मू० पुन० स्वा० मृ० चि० रे० अनु०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२। ५। ७। ८। १०। ११। १३। १५
लग्न	१। २। ४। ५। ७। ८। १०। ११

मन्त्र-सिद्ध करने का मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी, श्रवण, विशाखा, मृगा
नक्षत्रों में; रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारों में और
तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी, पूर्-
तिथियों में यंत्र-मंत्र सिद्ध करना शुभ होता है।

मन्त्र-सिद्ध करने के मुहूर्त्त का चक्र

नक्षत्र	उफा० ह० अश्वि० श्र० वि० मृ०
वार	र० सो० बु० गु० शु०
तिथि	२ । ३ । ५ । ७ । १० । ११ । १३ । १५

सर्वारम्भ मुहूर्त्त

लग्न से बारहवाँ और आठवाँ स्थान शुद्ध हो अर्थात् कोई ग्रह नहीं हो तथा जन्म लग्न व जन्म राशि से तीसरा, छटवाँ, दशवाँ, ग्यारहवाँ लग्न हो और शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तथा शुभ ग्रह युक्त हो; चन्द्रमा जंन्मलग्न व जन्मराशि से तीसरे, छटवे, दशवे, ग्यारहवे स्थान में हो तो सभी कार्य प्रारंभ करना शुभ होता है।